सितंबर 2022

मूल्य : ₹ 22

आज़ादी का अमृत महोत्सव

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

जनजातीय जीवन एवं संस्कृति

Academy For Education & Training

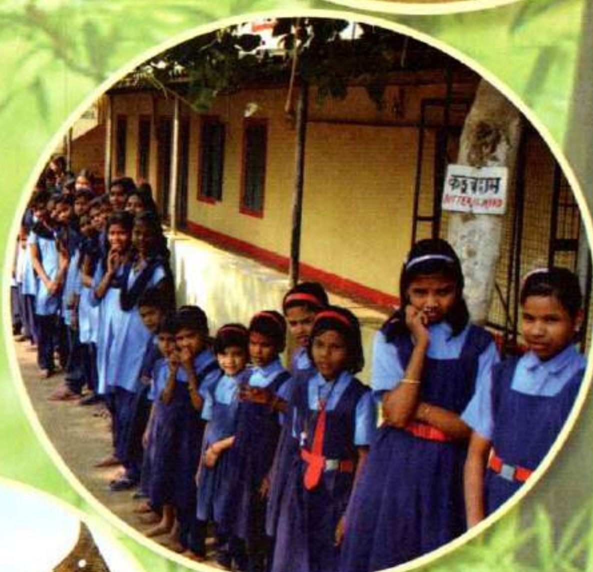

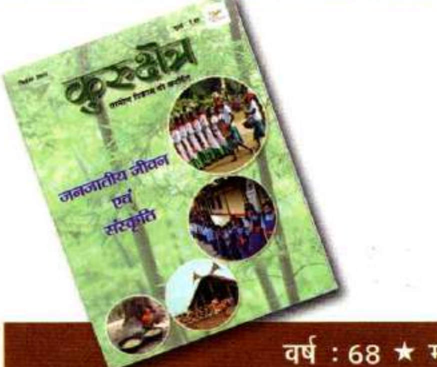

कुरुक्षेत्र

इस अंक में

वर्ष : 68 ★ मासिक अंक : 10 ★ पृष्ठ : 56 ★ भाद्रपद–आश्विन 1944 ★ सितंबर 2022

वरिष्ठ संपादक : ललिता खुराना

संयुक्त निदेशक : डी.के.सी. हृदयनाथ

आवरण : राजिन्द्र कुमार

संपादकीय कार्यालय
कमरा नं. 655, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन,
सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड,
नई दिल्ली–110 003
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

वेबसाइट : publicationsdivision.nic.in

@publicationsdivision
@DPD_India
@dpd_India

भारत में जनजातीय विकास की रणनीतियां — 5
–डा. के के त्रिपाठी

आदिवासियों के लिए सतत आजीविका — 12
–रामराव मुंडे, डा. मुनीराजू एस बी

जनजातीय शिक्षा के बढ़ते कदम — 17
–जे.पी. पांडेय

आदिवासी जीवन में वन और वनोपज का महत्व — 22
–अरविंद कुमार सिंह

आदिवासियों का प्रकृति प्रेम — 33
–अमरेंद्र किशोर

घुमंतु जनजातियों का विकास एवं नियोजन — 39
–डा. सविता केशरवानी

जनजातीय विरासत को उजागर करते वन क्षेत्र के मेले — 45
–डा. सुशील त्रिवेदी

आदिवासी संस्कृति में समानता एक जीवनशैली — 51
–अनिल चमड़िया

कुरुक्षेत्र सदस्यता शुल्क

पत्रिका ऑनलाइन खरीदने के लिए bharatkash.gov.in/product पर तथा ई–पुस्तकों के लिए Google play, Kobo या lmazon पर लॉग–इन करें।

वार्षिक : ₹ 230, द्विवार्षिक : ₹ 430, त्रिवार्षिक : ₹ 610

कुरुक्षेत्र की सदस्यता की जानकारी लेने, एजेंसी संबंधी सूचना तथा विज्ञापन छपवाने के लिए संपर्क करें–

अभिषेक चतुर्वेदी, संपादक, पत्रिका एकांश
प्रकाशन विभाग, कमरा सं. 779, सातवां तल,
सूचना भवन, सीजीओ परिसर,
लोधी रोड, नयी दिल्ली–110003

सदस्यता शुल्क जमा करने के बाद पत्रिका प्राप्त होने में कम से कम 8 सप्ताह का समय लगता है।

पत्रिका न मिलने की शिकायत हेतु इस पर मेल करें ई–मेल : pdjucir@gmail.com या दूरभाष: 011–24367453 पर संपर्क करें।

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो। पाठकों से आग्रह है कि कैरियर मार्गदर्शक किताबों/संस्थानों के बारे में विज्ञापनों में किए गए दावों की जांच कर लें। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषय–वस्तु के लिए 'कुरुक्षेत्र' उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन विभाग के विक्रय केंद्र

नई दिल्ली	पुस्तक दीर्घा, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड	110003	011–24367260
दिल्ली	हाल सं. 196, पुराना सचिवालय	110054	011–23890205
नवी मुंबई	701, सी–विंग, सातवीं मंजिल, केंद्रीय सदन, बेलापुर	400614	022-27570686
कोलकाता	8, एसप्लानेड ईस्ट	700069	033-22488030
चेन्नई	'ए विंग, राजाजी भवन, बसंत नगर	600090	044-24917673
तिरुअनंतपुरम	प्रेस रोड, नई गवर्नमेंट प्रेस के निकट	695001	0471-2330650
हैदराबाद	कमरा सं. 204, दूसरा तल, सीजीओ टावर, कवादिगुड़ा सिकंदराबाद	500080	040-27535383
बैंगलुरु	फर्स्ट फ्लोर, 'एफ विंग, केंद्रीय सदर, कोरामंगला	560034	080-25537244
पटना	बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ	800004	0612-2683407
लखनऊ	हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, क्षेत्र-ए, अलीगंज	226024	0522-2325455
अहमदाबाद	4–सी, नैप्च्युन टॉवर, चौथी मंजिल, एचपी पेट्रोल पंप के निकट, नेहरू ब्रिज कार्नर, आश्रम रोड, अहमदाबाद	380009	079-26588669

संपादकीय

देश की कुल आबादी में अनुसूचित जनजातियों का हिस्सा 8.6 प्रतिशत यानी 10.45 करोड़ है। (जनगणना 2011) अनुसूचित जनजातियों की आबादी का लगभग 92 प्रतिशत हिस्सा ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है। उल्लेखनीय है कि हमारे देश में समग्र रूप में जनजातीय आबादी बढ़ रही है। देश की जनसंख्या में उनका हिस्सा 1961 में 6.9 प्रतिशत था जो 2011 में बढ़ कर 8.6 प्रतिशत हो गया। पूर्वोत्तर क्षेत्र में देश की जनजातीय आबादी का 12 प्रतिशत हिस्सा रहता है।

Academy For Education & Training ★ Delhi ★

विकास के विभिन्न पैमानों पर अगर बात की जाए तो देश के अन्य समुदायों की तुलना में अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक और आर्थिक प्रगति धीमी रही है। हालांकि हमारे संविधान में अनुसूचित जनजातियों के हितों की रक्षा के लिए अनेक प्रावधान किए गए हैं। उनके सामाजिक–आर्थिक उत्थान हेतु कई कल्याणकारी योजनाएँ चलाई जा रही हैं। इन योजनाओं और उनके विकास की रणनीतियों का ब्यौरा इस अंक में शामिल किया गया है।

उल्लेखनीय है कि भारत में आदिवासी समाज भले ही भौतिक सुविधाओं में पीछे रहा हो लेकिन वह समृद्ध विरासत का अधिकारी और मूल निवासी रहा है। प्रकृति की गोद में रहते हुए उन्होंने इतिहास के लंबे कालखंडों में अपना मूलभूत कौशल, सादगी और संतोष की पूंजी को बनाए रखा। आर्थिक तौर पर वे कमजोर भले रहे हों लेकिन तमाम सोपानों पर वे सभ्य समाज से काफी आगे हैं। जनजातीय हस्तकला, संगीत और नृत्य की जो धरोहर उन्होंने संजों कर रखी है, वह उनकी समृद्ध विरासत और संस्कृति को दर्शाती हैं। आदिवासी समाज की समृद्ध संस्कृति और उनके प्रकृति के प्रति अटूट प्रेम को दर्शाते लेख भी इस अंक में शामिल किए गए हैं।

समृद्ध विरासत के धनी होने के बावजूद आदिवासियों को अन्य समुदायों की तुलना में आजीविका के लिए कड़ा संघर्ष करना पड़ता है। मूल रूप से वो जंगलों में रहते है इस नाते उनके जीवन में जंगल ही सबसे अहम है। आदिवासियों में अधिकतर की आजीविका वन आधारित और खेतीबाड़ी पर निर्भर है। भारत सरकार के जनजातीय कार्य मंत्रालय ने वनाधिकार कानून लागू होने के बाद इसके अब तक के प्रभावों पर राज्य जनजातीय अनुसंधान संस्थानों की मदद से जो अध्ययन कराए हैं, उसके उत्साहजनक नतीजे सामने आए हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि जनजातियों की आय में बढ़ोतरी के साथ उनके जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि हुई है। बड़ी संख्या में महिला अधिकार–पत्र धारक हैं जिस कारण महिलाओं को और सशक्त बनने का मौका मिला। ग्राम सभाओं की आय में भी वृद्धि हुई है। लघु वनोपजों की बिक्री के साथ स्वयं के वन संसाधनों के प्रबंधन और संरक्षण में वे अधिक सक्षम हुए हैं। हालांकि अध्ययनों में वन प्रशासन और उसके सशक्तीकरण के लिए क्षमता निर्माण, जैव विविधता सुधार और अन्य बातों के साथ बुनियादी ढांचे में सुधार का सुझाव भी दिया गया है। आदिवासियों के जीवन में वन और वनोपज के महत्व को रेखांकित करते आलेख में इस संदर्भ में विस्तृत जानकारी दी गई है।

वन धन योजना भविष्य में गेम चेंजर योजना साबित हो सकती है क्योंकि इससे लघु वनोपजों की बेहतर कीमत की ठोस राह निकलेगी। यह जनजातीय कलाकारों के लिए रोज़गार सृजन के लिए नयी राह खोल रही है। मूल्यवर्धित उत्पादों की बिक्री से प्राप्त आय सीधे आदिवासियों के पास पहुँचेगी तो उनका जीवन सरल होगा। पूर्वोत्तर में मणिपुर एवं नगालैंड जैसे राज्यों में स्टार्टअप मज़बूती पकड़ रहे हैं। इस अंक में शामिल नगालैंड में उद्यमिता को गति देते स्टार्टअप की सफलता की कहानी प्रेरणादायक है।

आदिवासी समाज में साक्षरता और शिक्षा में उल्लेखनीय प्रगति हुई है जिसका लेखा–जोखा 'जनजातीय शिक्षा के बढ़ते कदम' आलेख में दिया गया है। साथ ही, उद्यमिता और कौशल विकास की दिशा में प्रयासों में तेज़ी लाने की ज़रूरत है ताकि अनुसूचित जनजातियों के शिक्षित व्यक्तियों को अपने निवास स्थान के नज़दीक ही रोज़गार मिल सके। और आजीविका हेतु मात्र वनोपज संग्रह पर आश्रित आदिवासियों की ज़िंदगी में कुछ सकारात्मक बदलाव आए।

जनजातीय समाज का प्रकृति के प्रति अटूट प्रेम है और यह प्रेम उनकी संस्कृति से बेहद गहराई से जुड़ा है। इस अंक में हमने आदिवासियों के पेड़ों और प्रकृति के प्रति प्रेम और उनकी संस्कृति में रचे–बसे कई महत्वपूर्ण तथ्यों का समावेश किया है। आदिवासियो का स्वतन्त्रता संग्राम में भी उल्लेखनीय योगदान रहा है और आज़ादी के अमृत महोत्सव पर उनके इस योगदान को सामने लाने के प्रयास में सरकार ने कई कदम उठाए हैं। हाल ही में संस्कृति मंत्रालय ने एक कॉमिक बुक के रूप में आदिवासी स्वतन्त्रता सेनानियों की कहानियाँ प्रकाशित की हैं ताकि बच्चे–बड़े सभी आदिवासी स्वतन्त्रता सेनानियों के बलिदान के बारे में जान सकें। बिरसा मुण्डा की जयंती 15 नवंबर को 'जनजातीय गौरव दिवस' के रूप में मनाने की घोषणा भी इसी दिशा में एक सार्थक प्रयास है।

संक्षेप में, हमारे देश की पहली आदिवासी महिला राष्ट्रपति के चुनाव ने आदिवासी विमर्श को केंद्र में ला दिया है और आदिवासी जीवन के संघर्षों के साथ–साथ उनकी संस्कृति और विरासत से भी आम जन परिचित हो रहे हैं। इस अंक में हमने आदिवासी जन के कल्याण हेतु योजनाओं सहित उनकी संस्कृति से जुड़े बेहतरीन आयामों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। उम्मीद है कि हमारे पाठकों को यह अंक ज्ञानवर्धक और रुचिकर लगेगा।

भारत में जनजातीय विकास की रणनीतियां

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★Delhi★

–डा. के के त्रिपाठी

भारत सरकार के योजनाबद्ध प्रयासों ने देश में अनुसूचित जनजातियों के नागरिकों के समग्र विकास को गति दी है। इस रणनीति ने अनुसूचित जनजातियों की समस्याओं की पहचान करने के अलावा विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पहलकदमियों के जरिए इनके निवारण का रास्ता भी तैयार किया है। सरकार ने इन सामाजिक और आर्थिक पहलकदमियों को अपनी योजनाओं और कार्यक्रमों के माध्यम से लागू किया है। लेकिन साथ ही, खासतौर से अनुसूचित जनजातियों के लिए उनकी भागीदारी पर आधारित एक ऐसी स्वशासन प्रणाली को लोकप्रिय बनाने की सख्त ज़रूरत महसूस की गई है जिसमें यह समुदाय अपने संसाधनों का प्रबंधन खुद कर सके। इस तरह की भागीदारी पर आधारित और जनजाति प्रबंधित विकास प्रक्रिया से अनुसूचित जनजातियों का सशक्तीकरण संभव होगा। शैक्षिक अवसंरचना में इस बात पर गौर किया जाना चाहिए कि परिवर्तनशील और प्रतिस्पर्धी दुनिया में किस तरह आधुनिक और आवश्यकता आधारित प्रशिक्षण और कौशल उन्नयन के जरिए अनुसूचित जनजातियों के युवाओं की दक्षता और ज्ञान को बढ़ाया जाए।

भारत में विभिन्न पंचवर्षीय और सालाना योजनाओं में जनजातियों के विकास पर ज़ोर दिया गया है। लेकिन देश की अनुसूचित जनजातियों के विकास के मार्ग में चुनौतियां अब भी मौजूद हैं। इसका मुख्य कारण इस समुदाय की पारम्परिक जीवनशैली, दूरदराज के इलाकों में बसावट, बिखरी हुई आबादी और निरंतर विस्थापन है।

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार देश की कुल आबादी में अनुसूचित जनजातियों का हिस्सा 8.6 प्रतिशत यानी 10.45 करोड़ है। अनुसूचित जनजातियों की आबादी का लगभग 92 प्रतिशत हिस्सा ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है। कुल आबादी में अनुसूचित जनजातियों के अनुपात में वृद्धि देखी गई है। देश की जनसंख्या में उनका हिस्सा 1961 में 6.9 प्रतिशत था जो 2011 में बढ़ कर 8.6 प्रतिशत हो गया। लेकिन विकास के विभिन्न पैमानों पर देश के अन्य समुदायों की तुलना में अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक और आर्थिक प्रगति कम रही है। हमारे संविधान में अनुसूचित जनजातियों के हितों की रक्षा के लिए अनेक प्रावधान किए गए हैं।

इस आलेख में हम इन प्रावधानों के साथ ही अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए सरकारी रणनीतियों, नीतियों और कार्यक्रमों की समीक्षा करेंगे।

सांविधानिक प्रावधान

भारत के संविधान निर्माताओं ने अनुसूचित जनजातियों की विशेष ज़रूरतों को समझते हुए उनके हितों की रक्षा के लिए कुछ खास प्रावधान किए हैं। इन प्रावधानों का उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक न्याय सुनिश्चित करने के अलावा इस समुदाय को शोषण से बचाना भी है। नागरिकों के मौलिक अधिकार उनका समग्र विकास सुनिश्चित करते हैं। साथ ही, संविधान में निरूपित राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत सरकार को ऐसा माहौल बनाने के लिए प्रेरित करते हैं जिसमें नागरिक अपने मौलिक अधिकारों का इस्तेमाल कर सकें। अनुसूचित जनजातियों की बहुलता वाले क्षेत्रों के लिए संविधान में विशेष प्रावधान किए गए हैं। अनुसूचित जनजातियों के लिए सांविधानिक प्रावधानों को तालिका–1 में सूचीबद्ध किया गया है।

विकास योजनाएं और कार्यक्रम

नीति निर्माताओं और योजनाकारों ने पहली पंचवर्षीय योजना (1951–56) की शुरुआत से ही अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी है। पहली योजना में वंचित तबकों की ज़रूरतों को पर्याप्त और समुचित ढंग से पूरा करने के लिए योजनाओं और कार्यक्रमों को बनाने से संबंधित सिद्धांत

तालिका 1: अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए सांविधानिक प्रावधान

क्र. सं.	अनुच्छेद / अनुसूची	प्रावधान संक्षेप में
अनुच्छेद		
1	14	कानून की नज़र में समानता या सबको समान कानूनी संरक्षण
2	15	सरकारें धर्म, नस्ल, जाति, लिंग और जन्म स्थान के आधार पर किसी भी नागरिक के खिलाफ भेदभाव नहीं करेंगी
3	15(4)	सरकारें अनुसूचित जनजातियों समेत सामाजिक और शैक्षिक तौर पर पिछड़े तबकों की उन्नति के लिए कोई भी विशेष प्रावधान कर सकती हैं
4	16(4)	सरकारें नियुक्तियों या पदों में आरक्षण की व्यवस्था कर सकती हैं
5	38	सरकारें सामाजिक व्यवस्था को सुनिश्चित और संरक्षित कर जनसामान्य के कल्याण को बढ़ावा देने के लिए काम करेंगी
6	46	सरकारें अनुसूचित जनजातियों समेत सभी कमज़ोर तबकों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देंगी
7	164(1)	बिहार, मध्य प्रदेश और ओडिशा जैसे अनुसूचित जनजातियों की बड़ी आबादी वाले राज्यों में एक जनजातीय कल्याण मंत्री होगा
8	275(1)	अनुसूचित जनजातियों के कल्याण को बढ़ावा देने और अनुसूचित क्षेत्रों में प्रशासन के स्तर को सुधारने के लिए अनुदान
9	330, 332 और 335	लोकसभा, विधानसभा और सेवाओं में अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों का आरक्षण
10	340	सरकार सामाजिक और शैक्षिक तौर पर पिछड़े तबकों की स्थिति का पता लगाने के लिए एक आयोग नियुक्त करेगी
11	342	सरकार जनजातीय समुदायों को अनुसूचित जनजातियों के तौर पर चिह्नित करेगी
12	275(1)	अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए भारत के समेकित कोष से हर साल अनुदान जारी किए जाएंगे
अनुसूची		
13	पांचवीं	अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन और जनजातीय सलाहकार परिषदों के गठन के लिए निर्देश। ये परिषदें जनजातीय समुदाय के कल्याण से संबंधित मसलों की निगरानी करेंगी और उपयुक्त सलाह देंगी [अनुच्छेद 244(1)]
14	छठी	असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिज़ोरम में कुछ खास इलाकों को स्वायत्त ज़िले या स्वायत्त क्षेत्र घोषित कर तथा ज़िला परिषदों के गठन के ज़रिए अनुसूचित क्षेत्रों का प्रशासन [अनुच्छेद 244(2)]
संविधान संशोधन		
15	73वां और 74वां संशोधन तथा पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) कानून 1996 (पेसा)	अनुसूचित जनजातियों को सशक्त और सक्षम बनाने की दिशा में एक बड़ा कदम। इन समुदायों को अपनी ही पहलकदमियों के ज़रिए खुद के हितों और कल्याण को बढ़ावा देने में सक्षम बनाया गया। पेसा संवहनीय स्वायत्त जनजातीय शासन सुनिश्चित करने के लिए सांविधानिक, कानूनी और नीतिगत ढांचा प्रदान करता है।

निर्धारित किए गए। इसके अलावा, अनुसूचित जनजातियों के समग्र विकास के लिए प्रभावी और सघन अभियान चलाने के मकसद से विशेष प्रावधान भी किए गए।

सरकार ने पहली योजना के अंत में देश में अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए ठोस और समेकित विकास योजनाओं की ज़रूरत को महसूस किया। परिणामस्वरूप दूसरी योजना (1956–61) के दौरान अनुसूचित क्षेत्रों के लिए विकास कार्यक्रमों को चार समूहों में बांटा गया जो इस प्रकार थे– (1) संचार, (2) शिक्षा और संस्कृति, (3) जनजातीय अर्थव्यवस्था का विकास तथा (4) स्वास्थ्य, आवासन और जल आपूर्ति। आर्थिक विकास पर ज़ोर देते हुए इस बात का ध्यान रखा गया कि समाज में असमानता घटे। अनुसूचित जनजातियों के लिए विकास कार्यक्रमों की योजना बनाते समय उनकी सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और आर्थिक समस्याओं को ध्यान में रखा गया। ये कार्यक्रम इस समुदाय की संस्कृति और परम्पराओं के प्रति सम्मान और समझ पर आधारित थे। पहली योजना में जनजातीय कल्याण के लिए जो कार्यक्रम तैयार किए गए थे, उन्हें 1961 तक प्रभावी स्वरूप मिल गया। दूसरी योजना के इस आखिरी वर्ष में सरकार ने 43 विशेष बहुउद्देश्यीय जनजातीय प्रखंडों की स्थापना की। इन्हें बाद में जनजातीय विकास खंड (टीडीबी) का नाम दिया गया। अनुसूचित जनजातियों को अवसरों की समानता प्रदान करने के लिए दूसरी योजना में शामिल योजनाओं और नीतियों को तीसरी योजना (1961–66) में भी जारी रखा गया।

चौथी योजना (1969–74) में देशवासियों के जीवन–स्तर में तेज़ सुधार का संकल्प जाहिर किया गया ताकि सबके लिए समानता और सामाजिक न्याय सुनिश्चित किया जा सके। वर्ष 1971–72 में आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और ओडिशा में छह प्रायोगिक परियोजनाएं शुरू की गईं। पांचवीं योजना (1974–78) में विकास कार्यक्रमों का प्रत्यक्ष लाभ अनुसूचित जनजातियों तक पहुंचाने के लिए जनजातीय उप–योजना (टीएसपी) शुरू की गई। टीएसपी का उद्देश्य सिर्फ अनुसूचित जनजातियों के जीवन–स्तर में सुधार के लिए विकास गतिविधियों को बढ़ावा देने तक सीमित नहीं था। इसमें इस समुदाय के हितों की कानूनी और प्रशासनिक मदद से रक्षा पर भी ध्यान दिया गया। टीएसपी के तहत यह प्रयास किया गया कि विकास के अन्य क्षेत्रों से अनुसूचित जनजातियों के लिए धन का प्रवाह आबादी में उनके अनुपात के अनुरूप हो तथा जवाबदेही और पारदर्शिता सुनिश्चित की जा सके।

छठी योजना (1980–85) में कोषों का अधिक विकेंद्रीकरण सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया। साथ ही, अनुसूचित जनजातियों के कम–से–कम 50 प्रतिशत परिवारों को गरीबी रेखा से ऊपर लाने के लिए निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम चलाया गया। अनुसूचित क्षेत्रों में अवसंरचनात्मक सुविधाओं का विस्तार किया गया। सातवीं योजना (1985–90) के दौरान अनुसूचित जनजातियों के आर्थिक विकास के लिए दो राष्ट्रीय संस्थाओं का गठन किया गया। इनमें से एक 1987 में गठित जनजातीय सहकारी विपणन महासंघ (ट्राइफेड) है। यह राज्य जनजातीय विकास सहकारी निगमों के लिए शीर्ष संस्था है। इसके अलावा, अप्रैल 2001 में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और जनजाति वित्त और विकास निगम (एनएसएफडीसी) की शुरुआत की गई। ट्राइफेड अनुसूचित जनजातियों को उनके वन और कृषि उत्पादों के लिए लाभकारी मूल्य दिलाने में मदद करता है। दूसरी तरफ, एनएसएफडीसी का काम रोज़गार सृजन के लिए ऋण की व्यवस्था करना है। आठवीं योजना (1992–97) में अनुसूचित जनजातियों के शोषण को खत्म करने के प्रयासों के साथ ही उनके अधिकारों के दमन, भूमि से बेदखली, न्यूनतम मजदूरी का भुगतान नहीं होने तथा उन्हें छोटे वन उत्पादों के संग्रह के अधिकार से वंचित किए जाने जैसी समस्याओं के हल पर भी ध्यान दिया गया।

नौवीं योजना (1997–2002) में ऐसे परिवेश के निर्माण पर ज़ोर दिया गया जिसमें अनुसूचित जनजातियां अपने अधिकारों और विशेषाधिकारों का स्वतंत्रता से उपयोग करते हुए समाज के बाकी तबकों के समान ही जीवन व्यतीत कर सकें। इसके बाद दसवीं योजना (2002–07) में जनजातीय समाज के अनसुलझे मसलों और समस्याओं को समयबद्ध ढंग से सुलझाने पर ध्यान केंद्रित किया गया।

ग्यारहवीं (2007–12) और बारहवीं (2012–17) योजनाओं में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के उपायों को मज़बूत करने पर ज़ोर दिया गया। इसके अलावा, राज्यों को अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए यथोचित और समुचित गतिविधियां चलाने के बारे में निर्देश दिए गए। इसके बाद से भारत सरकार के नीति आयोग के जरिए सालाना योजनाओं में राज्यों में अनुसूचित जनजातियों के विकास की ज़रूरतों को ध्यान में रखा गया है। आयोग जनजातीय उप–योजनाओं को केंद्रीय मंत्रालयों और विभागों के जरिए लागू करने के बारे में समय–समय पर दिशानिर्देश जारी करता है। नीति आयोग ने केंद्रीय मंत्रालयों और विभागों को हर साल अपने कुल योजना आवंटन का 4.3 से 17.5 प्रतिशत तक हिस्सा जनजातीय विकास के उद्देश्य से रखने के लिए अधिकृत किया है। विकास के कुछेक महत्वपूर्ण पैमानों पर अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति इस प्रकार है:

आजीविका विकास

योजना आयोग ने भारत में गरीबी के आकलन के लिए राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (एनएसएसओ) के सर्वे नतीजों पर आधारित तेंदुलकर पद्धति को अपनाया था। इन अनुमानों के अनुसार 2011–12 में गरीबी रेखा से नीचे के अनुसूचित जनजातियों के लोगों की संख्या गाँवों में 45.3 प्रतिशत और शहरी क्षेत्रों में 24.1 प्रतिशत थी। वर्ष 2009–10 और 2011–12 का राज्यवार विस्तृत ब्यौरा तालिका–2 में दिया गया है।

Elite Academy For Education Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. Delhi

एनएसएसओ के आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (पीएलएफएस) के अनुसार अनुसूचित जनजातियों के लिए सामान्य स्थिति (मूलः सहायक) में श्रमबल भागीदारी दर (एलएफपीआर) 2017–18 में 41.8 प्रतिशत और 2019–20 में 47.1 प्रतिशत थी। सभी वर्गों के लिए यह दर 2017–18 में 36.9 प्रतिशत और 2019–20 में 40.1 प्रतिशत थी (तालिका–3)।

इसी तरह, एनएसएसओ के पीएलएफएस 2019–20 से पता चलता है कि अनुसूचित जनजातियों के लिए सामान्य स्थिति के अनुसार बेरोज़गारी दर 2017–18 में 4.3 प्रतिशत से घट कर 2019–20 में 3.4 प्रतिशत रह गई (तालिका–4)।

साक्षरता और शिक्षा

2011 की जनगणना के अनुसार सभी आयु वर्गों को मिला कर साक्षरता की दर कुल आबादी में 73 प्रतिशत और अनुसूचित जनजातियों में 59 प्रतिशत थी। युवा वर्ग की बात करें तो कुल आबादी और अनुसूचित जनजातियों के बीच साक्षरता दर का अंतर 11.1 प्रतिशत था। यह अंतर युवकों में 7.1 प्रतिशत और युवतियों में 14.7 प्रतिशत का था। कुल आबादी और अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या के बीच साक्षरता दर का यह फासला काफी बड़ा है। निःसंदेह, सरकार के साक्षरता अभियानों का लाभ देश के सभी नागरिकों तक समान रूप से नहीं पहुंच पाया है (तालिका–5)।

विद्यालय परित्याग दर शैक्षिक विकास के अभाव और शिक्षा के एक खास स्तर तक पहुंचने में किसी सामाजिक समूह की अक्षमता का महत्वपूर्ण संकेतक है। अनुसूचित जनजातियों के मामले में प्राथमिक, उच्च–प्राथमिक और माध्यमिक कक्षाओं में विद्यालय परित्याग दर में कमी आ रही है (तालिका–6)।

अनुसूचित जनजातियों के छात्रों में साक्षरता की कमी, औपचारिक शिक्षा के परित्याग और दाखिले के कम अनुपात जैसी समस्याओं के समाधान के लिए उन्हें विशेष प्रोत्साहन दिए जा रहे हैं। स्कूलों में उनकी शिक्षा निःशुल्क किए जाने के साथ ही उन्हें पुस्तकें और वर्दियां मुफ्त दी जा रही हैं। अनुसूचित जनजातियों के लिए खासतौर से आवासीय विद्यालय खोले गए हैं। इनमें इस समुदाय के छात्रों के भोजन और आवास का खर्च सरकार वहन करती है। ज़िला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय, मध्याह्न भोजन योजना और नवोदय विद्यालय के अंतर्गत अनुसूचित जनजातियों के छात्रों पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। शिक्षा संवर्धन अभियान का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जनजातियों के छात्रों में साक्षरता का प्रसार है। दूरदराज के गाँवों के निवासी और गरीब छात्रों के लिए छात्रावास की सुविधा उपलब्ध करायी जा रही है ताकि वे अपनी पढ़ाई जारी रख सकें। लड़कियों के लिए छात्रावासों का निर्माण तीसरी योजना के दौरान ही शुरू कर दिया गया था। वर्ष 1989–90 में अनुसूचित जनजातियों के लड़कों के लिए छात्रावासों के निर्माण की एक अलग योजना शुरू की गई। जनजातीय उप–योजना के क्षेत्रों में 1990–91 से आदिवासी विद्यालयों की स्थापना शुरू की गई। सरकार ने अनुसूचित जनजातियों के छात्रों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के मकसद से संविधान के अनुच्छेद 275 (1) के तहत कोष के एक अंश का उपयोग करने का फैसला किया। इस धन का इस्तेमाल 20 राज्यों में छठी से बारहवीं तक कक्षाओं के लिए 288 एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालयों (ईएमआरएस) की स्थापना पर किया जाना था। वर्ष 1997–98 में शुरू की गई इस पहल का उद्देश्य अनुसूचित जनजातियों के छात्रों को उच्चतर और पेशेवर शिक्षा के पाठ्यक्रमों तथा सरकार और सार्वजनिक क्षेत्र की उच्चस्तरीय नौकरियों में आरक्षण का लाभ उठा पाने के लायक बनाना था। संशोधित कार्यक्रम को 12 सितंबर, 2019 को शुरू किए जाने के समय तक 200 ईएमआरएस काम करने लगे थे।

सरकार ने संशोधित योजना के तहत ईएमआरएस की स्थापना के लिए देश में 452 प्रखंडों की पहचान की है। ये प्रखंड इन

तालिका–2: 2009–10 और 2011–12 में गरीबी रेखा से नीचे जनजातीय आबादी (प्रतिशत में)

क्र.सं.	राज्य	ग्रामीण		शहरी	
		2009-10	2011-12	2009-10	2011-12
1	आंध्र प्रदेश	40.2	24.1	21.2	12.1
2	असम	32.0	33.4	29.2	15.6
3	बिहार	64.4	59.3	16.5	10.3
4	छत्तीसगढ़	66.8	52.6	28.6	35.2
5	गुजरात	48.6	36.5	32.2	30.1
6	हिमाचल प्रदेश	22.0	9.5	19.6	4.0
7	जम्मू कश्मीर	3.1	16.3	15.0	3.0
8	झारखंड	51.5	51.6	49.5	28.7
9	कर्नाटक	21.3	30.8	35.6	33.7
10	केरल	24.4	41.0	5.0	13.6
11	मध्य प्रदेश	61.9	55.3	41.6	32.3
12	महाराष्ट्र	51.7	61.6	32.4	23.3
13	ओडिशा	66.0	63.5	34.1	39.7
14	राजस्थान	35.9	41.4	28.9	21.7
15	तमिलनाडु	11.5	36.8	17.6	2.8
16	उत्तर प्रदेश	49.8	27.0	20.2	16.3
17	उत्तराखंड	20.0	11.9	0.0	25.7
18	पश्चिम बंगाल	32.9	50.1	20.6	44.5
	भारत	47.4	45.3	30.4	24.1

स्रोतः जनजातीय कार्य मंत्रालय, भारत सरकार की वार्षिक रिपोर्ट 2021–22

तालिका 3: अनुसूचित जनजातियों और सभी वर्गों के लिए श्रमबल भागीदारी दर (एलएफपीआर) 2017–18 से 2019–20 तक (प्रतिशत में)

सामाजिक समूह	ग्रामीण			शहरी			ग्रामीण+शहरी		
	पुरुष	महिला	व्यक्ति	पुरुष	महिला	व्यक्ति	पुरुष	महिला	व्यक्ति
पीएलएफएस (2019–20)									
अजजा	57.4	38.0	47.9	56.3	25.6	41.3	57.2	36.5	47.1
सभी	56.3	24.7	40.8	57.8	18.5	38.6	56.8	22.8	40.1
पीएलएफएस (2018–19)									
अजजा	57.3	28.7	43.3	54.3	18.4	36.5	57	27.6	42.5
सभी	55.1	19.7	37.7	56.7	16.1	36.9	55.6	18.6	37.5
पीएलएफएस (2017–18)									
अजजा	56.6	27.6	42.5	53.6	18.4	36.6	56.3	26.6	41.8
सभी	54.9	18.2	37.0	57.0	15.9	36.8	55.5	17.5	36.9

स्रोतः पीएलएफएस 2019–20, एनएसओ, सांख्यिकी और कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय (जनजातीय कार्य मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट 2021–22 से उद्धृत)

तालिका 4: अनुसूचित जनजातियों और सभी वर्गों के लिए 2017–18 से 2019–20 तक बेरोज़गारी दर (प्रतिशत में)

सामाजिक समूह	ग्रामीण			शहरी			ग्रामीण+शहरी		
	पुरुष	महिला	व्यक्ति	पुरुष	महिला	व्यक्ति	पुरुष	महिला	व्यक्ति
पीएलएफएस (2019–20)									
अजजा	3.7	1.8	3.0	7.1	8.0	7.3	4.1	2.3	3.4
सभी	4.5	2.6	4.0	6.4	8.9	7.0	5.1	4.2	4.8
पीएलएफएस (2018–19)									
अजजा	4.4	2.4	3.8	10.5	14.4	11.5	5.0	3.3	4.5
सभी	5.6	3.5	5.0	7.1	9.9	7.7	6.0	5.2	5.8
पीएलएफएस (2017–18)									
अजजा	4.9	2.2	4.0	7.0	7.6	7.1	5.1	2.6	4.3
सभी	5.8	3.8	5.3	7.1	10.8	7.8	6.2	5.7	6.1

स्रोतः पीएलएफएस 2019–20, एनएसओ, सांख्यिकी और कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय (जनजातीय कार्य मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट 2021–22 से उद्धृत)

तालिका 5: विभिन्न आयु वर्गों में साक्षरता दर–जनगणना 2011

सभी वर्ग (उम्र समूह)	कुल			अनुसूचित जनजाति		
	व्यक्ति	पुरुष	महिला	व्यक्ति	पुरुष	महिला
सभी उम्र	73.0	80.9	64.6	59.0	68.5	49.4
10–14	91.1	92.2	90.0	86.4	88.3	84.4
15–19	88.8	91.2	86.2	80.2	85.7	74.6
20–24	83.2	88.8	77.3	69.2	79.6	59.0
किशोर (10–19)	90.0	91.7	88.2	83.6	87.4	79.9
युवा (15–24)	86.1	90.0	81.8	75.0	82.9	67.1

स्रोतः महापंजीयक कार्यालय, भारत (जनजातीय कार्य मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट 2021–22 से उद्धृत)

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. * Delhi *

तालिका 6: अनुसूचित जनजातियों के छात्रों के लिए स्कूली शिक्षा में विद्यालय छोड़ने की दर

वर्ष / कक्षा	प्राथमिक			उच्च प्राथमिक			माध्यमिक		
	बालिका	बालक	कुल	बालिका	बालक	कुल	बालिका	बालक	कुल
2015–16	4.18	4.29	4.24	9.64	9.70	9.67	26.28	26.27	26.27
2016–17	3.91	3.96	3.94	8.60	8.69	8.64	27.15	27.85	27.51
2017–18	3.48	3.82	3.66	6.14	5.95	6.04	21.36	22.90	22.14
2018–19	5.23	5.72	5.48	6.46	6.89	6.69	23.38	26.40	24.93
2019–20	3.45	3.90	3.69	5.65	6.15	5.90	22.49	25.51	24.03

स्रोतः शिक्षा के लिए एकीकृत ज़िला सूचना प्रणाली प्लस (यूडीआईएसई) शिक्षा मंत्रालय (जनजातीय कार्य मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट 2021–22 से उद्धृत)

विद्यालयों की स्थापना के लिए 50 प्रतिशत या इससे ज्यादा जनजातीय आबादी और कम–से–कम 20,000 आदिवासियों के निवास की शर्तें पूरी करते हैं। इन प्रखंडों में स्थापित किए जाने वाले ईएमआरएस पुरानी योजना के तहत मंज़ूर 288 विद्यालयों के अतिरिक्त होंगे। सरकार ने 740 ईएमआरएस खोलने का लक्ष्य निर्धारित किया है। मौजूदा समय में देश भर में 378 ईएमआरएस चल रहे हैं। इनमें से 205 विद्यालयों का संचालन पिछले पांच वर्षों (2017–22) के दौरान शुरू हुआ है।

उद्यमिता और कौशल विकास

साक्षरता और शिक्षा में प्रगति के साथ ही उद्यमिता के माहौल और कौशल विकास की पहलकदमियों की भी दरकार है ताकि अनुसूचित जनजातियों के शिक्षित व्यक्तियों को अपने निवास स्थान के नज़दीक ही समुचित रोज़गार मिल सके। कौशल विकास मंत्रालय ने स्किल इंडिया मिशन के तहत इस दिशा में कई योजनाएं और कार्यक्रम शुरू किए हैं। प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना, जन शिक्षण संस्थान योजना और राष्ट्रीय प्रशिक्षुता संवर्धन योजना के ज़रिए अल्पकालिक प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है। शिल्पकार प्रशिक्षण योजना में जनजातीय समुदाय समेत समाज के सभी तबकों के युवाओं को औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों के ज़रिए दीर्घकालिक कौशल उपलब्ध कराया जाता है। इन सभी योजनाओं में अनुसूचित जनजाति घटक के माध्यम से आदिवासियों के लिए कोषों के उपयोग का अनिवार्य प्रावधान किया गया है। संसाधनों की कोई कमी नहीं होने के बावजूद अनुसूचित जनजातियों के रोज़गार के योग्य युवाओं को उनकी ज़रूरतों और आकांक्षाओं के अनुरूप विभिन्न पेशों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना एक बड़ी चुनौती है।

निष्कर्ष

सरकार की योजनाओं और कार्यक्रमों में अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक–आर्थिक विकास पर हमेशा ज़ोर दिया गया है। लेकिन राज्यों में इस दिशा में हुई प्रगति में काफी असमानता है। आँकड़ों से ज़ाहिर है कि अन्य समुदायों की तुलना में अनुसूचित जनजातियां आर्थिक तौर पर ज़्यादा पिछड़ी हैं। अनुसूचित जनजातियों की गरीबी रेखा से नीचे की ज़्यादातर आबादी भूमिहीन खेतिहर मजदूरों की है। उनके पास उत्पादक संपत्तियां बहुत कम या बिल्कुल ही नहीं हैं।

सरकार ने अनुसूचित जनजातियों की समस्याओं की पहचान करते हुए विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पहलकदमियों के जरिए उनके समाधान के तौर–तरीके तैयार किए हैं। जनजातियों की भागीदारी पर आधारित स्वशासन की एक ऐसी प्रणाली को लोकप्रिय बनाने की ज़रूरत है जिसमें इस समुदाय के सदस्य संसाधनों का खुद प्रबंध कर अपनी नियति स्वयं निर्धारित करें। इससे जनजातियों का उनकी भागीदारी और उनके प्रबंधन वाली विकास प्रक्रिया में सशक्तीकरण होगा।

उचित स्थानों पर प्राइमरी स्कूलों और आवासीय विद्यालयों जैसी शैक्षिक अवसंरचना के निर्माण का कदम सराहनीय है। लेकिन अनुसूचित क्षेत्रों में आवश्यकता आधारित प्रशिक्षण और कौशल उन्नयन के माध्यम से अनुसूचित जनजातियों के युवाओं की योग्यता और ज्ञान के आधार को बढ़ाने के लिए अतिरिक्त प्रयास किए जाने चाहिए। आदिवासी समुदाय का बड़ा हिस्सा आजीविका के लिए छोटे वनोपजों और कम उत्पादकता वाली कृषि पर निर्भर करता है। लिहाजा, उत्पादकता और गुणवत्ता बढ़ाने तथा जनजातीय उत्पादों को संवहनीय ढंग से बाज़ार से जोड़ने के प्रयास किए जाने चाहिए। आखिरी महत्वपूर्ण बात यह कि अनुसूचित जनजातियों के उत्थान की योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए विभागीय सहयोग, तालमेल और एकजुटता की आवश्यकता है।

संदर्भः

वार्षिक रिपोर्ट, 2021–22, जनजातीय कार्य मंत्रालय

https://tribal.nic.in, जनजातीय कार्य मंत्रालय

(लेखक सहकारिता मंत्रालय में विशेष कार्य अधिकारी हैं। लेख में व्यक्त विचार निजी हैं।)

ईमेलः tripathy123@rediffmail.com

आदिवासियों के समग्र विकास के लिए योजनाएं

जनजातीय कार्य मंत्रालय निम्नलिखित योजनाओं को क्रियान्वित कर रहा है जिसके लिए राज्य सरकार से प्राप्त प्रस्तावों के आधार पर राज्य सरकार को फंड जारी किए जाते हैं–

I. प्री मैट्रिक और पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति योजना।

II. संविधान के अनुच्छेद 275(1) के तहत अनुदान।

III. एससीए से टीएसएस जिसे अब प्रधानमंत्री आदि आदर्श ग्राम योजना के रूप में नया नाम दिया गया है।

IV. विशेष रूप से कमज़ोर जनजातीय समूहों (पीवीटीजी) के लिए अनुदान।

V. टीआरआई को मदद।

प्री और पोस्ट मैट्रिक योजनाएं मांग आधारित योजनाएं हैं। इसके तहत प्रत्येक एसटी छात्र, जिसकी पारिवारिक आय 2.5 लाख रुपये तक है, पूरे भारत में कक्षा IX से पोस्ट डॉक्टरेट तक की शिक्षा के लिए छात्रवृत्ति का हकदार है। राज्य वित्तीय वर्ष के दौरान अनुमानित व्यय के लिए पिछले वर्षों में किए गए व्यय के आधार पर प्रस्ताव भेजते हैं और राज्यों को केंद्रीय हिस्से का 50 प्रतिशत तक अग्रिम राशि जारी कर दी जाती है। राज्य द्वारा छात्रों को छात्रवृत्ति वितरित करने और यूसी जमा करने के बाद, शेष राशि राज्य को जारी की जाती है, बशर्ते राज्य ने अपना हिस्से का योगदान कर दिया हो।

अनुच्छेद 275(1), एससीए से टीएसएस और पीवीटीजी योजना के तहत अनुदान के संबंध में, राज्य को राज्य–स्तरीय कार्यकारी समिति (एसएलईसी) द्वारा अनुमोदित प्रस्तावों को प्रस्तुत करना आवश्यक होता है। जनजातीय कार्य सचिव की अध्यक्षता में परियोजना अनुमोदन समिति द्वारा प्रस्तावों की जांच की जाती है, जिसके बाद वित्त विभाग द्वारा उस पर सहमति व्यक्त की जाती है। प्रत्येक राज्य को इन 3 योजनाओं में उस राज्य की जनसंख्या के मानदंड और भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर हिस्सा आवंटित किया गया है। पिछले वर्षों में जारी किए गए फंड में से बच गई राशि, फंडों के उपयोग की स्थिति और आदिवासी अनुदान प्रबंधन प्रणाली (एडीआईजीआरएएमएस) पर प्रस्तुत भौतिक प्रस्ताव रिपोर्ट को ध्यान में रखते हुए राज्य को धनराशि जारी की जाती है। इन राज्यों से प्राप्त प्रस्तावों और स्वीकृत परियोजनाओं का विवरण जनजातीय कार्य मंत्रालय की वेबसाइट (tribal.nic.in) पर देखा जा सकता है। लंबित उपयोगिता प्रमाणपत्रों और परियोजनाओं की प्रगति का विवरण मंत्रालय द्वारा विकसित डैशबोर्ड (dashboard.tirbal.gov.in) पर 'स्टेट इन ए ग्लांस' मॉड्यूल में देखा जा सकता है, जिसे हर महीने के पहले दिन अपडेट किया जाता है।

टीआरआई को अनुदान की योजना–टीआरआई को अनुसंधान परियोजनाओं, प्रशिक्षण, सांस्कृतिक आदान–प्रदान, त्योहारों के आयोजन, शिल्प मेला, पेंटिंग और अन्य प्रतियोगिताओं आदि जैसी विभिन्न गतिविधियों के लिए उनसे प्राप्त प्रस्तावों के आधार पर फंड दिया जाता है। टीआरआई भवन, संग्रहालय और जनजातीय स्मारकों आदि जैसे बुनियादी ढांचे के उन्नयन/निर्माण के लिए टीआरआई को फंड जारी किया जाता है। इन राज्यों से प्राप्त प्रस्तावों और अनुमोदित परियोजनाओं का विवरण मंत्रालय की वेबसाइट (tribal.nic.in) पर देखा जा सकता है। परियोजनाओं का विवरण मंत्रालय द्वारा विकसित ऑनलाइन पोर्टल जैसे tri.tribal.gov.in और adiprashikshan.tribal.gov.in पर देखा जा सकता है।

राज्य को प्रत्येक वित्तीय वर्ष के लिए नए सिरे से प्रस्ताव भेजना आवश्यक होता है। राज्यों से प्राप्त सभी प्रस्तावों को फंड की उपलब्धता और पिछले वर्षों में स्वीकृत इसी तरह की परियोजनाओं में राज्य के अंतराल विश्लेषण और प्रदर्शन को देखते हुए नई परियोजना की आवश्यकता के आधार पर एक ही वित्तीय वर्ष में अनुमोदित या अस्वीकार कर दिया जाता है।

वित्त चक्र 2021–26 के लिए, कई मौजूदा योजनाओं को एक–दूसरे के साथ मिला दिया गया है, उन्हें सुधार कर नया रूप दिया गया है और उनके दायरे को विस्तृत कर दिया गया है। आदिवासियों के समग्र विकास के लिए बनाई गई तीन योजनाएं इस प्रकार हैं–

प्रधानमंत्री आदि आदर्श ग्राम योजना

एससीए से टीएसएस की मौजूदा योजना का दायरा बढ़ा दिया गया है, जिसमें 'प्रधानमंत्री आदि आदर्श ग्राम योजना' के तहत 36,428 गाँवों को आदर्श ग्राम के रूप में विकसित करने के लिए संबंधित मंत्रालयों के साथ मिलकर इन गाँवों का व्यापक विकास किया जाएगा। इन गाँवों में आदिवासियों की आबादी 500 से अधिक और कुल संख्या की 50 प्रतिशत तक है। 1354 करोड़ रुपये की राशि आवंटित की गई है जिसका उपयोग जनजातीय कल्याण कार्यक्रमों के लिए विभिन्न मंत्रालयों को उनकी संबंधित योजनाओं के लिए आवंटित किए गए 87,524 करोड़ रुपये के एसटीसी घटक के अलावा गैप फिलिंग व्यवस्था के रूप में किया जाएगा। अगले पांच वर्षों के लिए 7276 करोड़ रुपये की धनराशि को कैबिनेट ने मंजूरी दे दी है।

प्रधानमंत्री जनजातीय विकास मिशन

इस मिशन का लक्ष्य वन धन समूहों के गठन के माध्यम से अगले पांच वर्षों में आजीविका संचालित आदिवासी विकास हासिल करना है। इन वन धन समूहों को वन धन केंद्रों के रूप में संगठित किया गया है। आदिवासियों द्वारा एकत्रित एमएफपी को इन केंद्रों में संसाधित किया जाएगा और वन धन निर्माता उद्यमों के माध्यम से इनका विपणन किया जाएगा। 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' के हिस्से के रूप में अगले 5 वर्षों में नए हाट बाज़ार और माल गोदाम विकसित किए जाएंगे। इस योजना को लागू करने के लिए ट्राइफेड नोडल एजेंसी होगी। वन उत्पादों का विपणन ट्राइब इंडिया स्टोर्स के माध्यम से किया जाएगा। मिशन के तहत अगले पांच वर्षों के लिए 1612 करोड़ रुपये की राशि निर्धारित की गई है।

एसटी के लिए वेंचर कैपिटल फंड

'अनुसूचित जनजातियों के लिए उद्यम पूंजी कोष (वीसीएफ–एसटी)' की नई योजना के लिए 50 करोड़ रुपये की राशि स्वीकृत की गई है, जिसका उद्देश्य एसटी समुदाय के बीच उद्यमिता को बढ़ावा देना है। वीसीएफ–एसटी योजना एसटी उद्यमिता को बढ़ावा देने और एसटी युवाओं द्वारा स्टार्टअप की सोच को विकसित करने और उनका समर्थन करने के लिए सामाजिक क्षेत्र की एक पहल होगी।

यह जानकारी जनजातीय कार्य मंत्री श्री अर्जुन मुंडा ने 22 मार्च, 2022 को लोकसभा में दी।

Elite Academy Education Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

आदिवासियों के लिए सतत आजीविका

– रामराव मुंडे, डा. मुनीराजू एस बी

आदिवासियों की रक्षा के लिए भारत के संविधान में विशेष उपाय किए गए हैं और उनका कल्याण सुनिश्चित किया गया है। उनका पालन करते हुए सरकारों ने जनजातियों को अलग–थलग रहने, निरक्षरता, निर्धनता और भुखमरी के चंगुल से निकालने के प्रयासों में कसर नहीं छोड़ी है। संविधान के अंतर्गत अधिनियमित कानूनों के तहत उनके लिए अनिवार्य रूप से न्यूनतम बुनियादी ढांचे और अन्य सुविधाओं का निर्माण करने के अलावा राहत और पुनर्वास प्रदान करके उन्हें मुख्यधारा में लाने के प्रयास जारी रखे हैं। केंद्र और राज्यों ने आदिवासियों के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण, रोज़गार, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और वास स्थलों से विस्थापन की स्थिति में राहत और पुनर्वास प्रदान करके उनके लिए अवसरों का सृजन किया है।

आदिवासी भारतीय प्रायद्वीप के मूल निवासी हैं। 1951 की जनगणना के अनुसार आदिवासियों की जनसंख्या भारत की कुल जनसंख्या का 5.6 प्रतिशत था और 2011 की जनगणना के अनुसार यह बढ़कर 8.66 प्रतिशत हो गई। भारत में आदिवासी समुदाय दो भिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में बसे हैं यानी मध्य भारत और उत्तर–पूर्वी क्षेत्र। अनुसूचित जनजाति की आधी से अधिक आबादी मध्य भारत, यानी मध्य प्रदेश (14.69 प्रतिशत), महाराष्ट्र (10.08 प्रतिशत), उड़ीसा (9.2 प्रतिशत), राजस्थान (8.86 प्रतिशत), गुजरात (8.55 प्रतिशत), झारखंड (8.29 प्रतिशत) और छत्तीसगढ़ (7.5 प्रतिशत) में बसी है। उनमें से लगभग 89.97 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में और 10.03 प्रतिशत शहरी क्षेत्रों में रहते हैं। आदिवासी समुदायों का एक बड़ा भाग अभी भी अपनी आजीविका के लिए छोटे पैमाने की खेती, जंगल और वन आधारित पशुधन पर निर्भर है, कुछ विशेष रूप से वंचित जनजातीय समूह, जिन्हें पहले आदिम जनजातीय समूह के रूप में जाना जाता था, वे जंगल और वन तथा पर्वतीय क्षेत्रों की परिधि में शिकारी, भोजन संग्रहकर्ता, चरवाहे और छोटे किसानों के रूप में रहते हैं।

पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले जनजातीय समुदाय झूम खेती के आदी हो चुके हैं; एक ऐसी पद्धति जो समग्र रूप से मिट्टी, क्षेत्र और वन पारिस्थितिकी के लिए एक बड़ा खतरा बन गई है। आदिवासियों के वास स्थल भौगोलिक रूप से अलग– थलग हैं और शहरी और औद्योगिक हलचल से दूर हैं लेकिन खनिज, कोयला, जल संसाधन, वन, दर्शनीय स्थलों आदि जैसे प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता ने उद्योग और व्यापारिक समूहों को वहां निवेश करने और उनसे लाभ भुनाने के लिए आकर्षित किया। इससे निवेशकों को लाभ हुआ लेकिन आदिवासियों की आजीविका चली गई। वन संरक्षण अधिनियम–1980 के अध्यादेश, विकास परियोजनाओं के लिए पहल और बाद की सरकारों की आर्थिक विकास नीतियों में बदलाव का आदिवासियों के लिए आजीविका के अवसरों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। औद्योगिक विकास में दूसरों के साथ प्रतिस्पर्धा करने और ग्रामीण तथा शहरी समुदायों को सहूलियत प्रदान करने के सरकार के प्रयासों ने खनन, बिजली उत्पादन, सिंचाई, वनों की सुरक्षा, वन्य जीवन के संरक्षण आदि के लिए आदिवासियों के प्राकृतिक वास वाले वन और पहाड़ी क्षेत्रों को चिह्नित किया।

मध्य प्रदेश के खंडवा ज़िले के आदिवासी ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं बाँस का सामान बनाते हुए।

Academy For Education & Training ★ Delhi ★

स्वतंत्रता–पूर्व स्थिति

मानव जाति के विकास के बाद से मनुष्य शिकारी और भोजन संग्रहकर्ता थे। अनेक समुदाय बस गए और सभ्य तथा सम्मानजनक जीवन जीने लगे पर आदिवासियों ने अपने जीवन और आजीविका को वन और वन–आधारित पशुधन तक सीमित कर दिया। मुगलों और अंग्रेज़ों द्वारा भारत पर आक्रमण से पहले आदिवासियों को समाज का समान भाग माना जाता था और वे पूरी तरह से राजशाहियों, भूमि और वन राजनीति में, अन्य समूहों के साथ सहायक संबंधों में, विशेष रूप से व्यावसायिक विशेषज्ञता और वाणिज्य व युद्ध में भी शामिल थे। हालांकि यूरोपीय उपनिवेश युग ने बाहरी लोगों के साथ उनके जीवन को बदल दिया जिन्होंने अपने संसाधनों के लिए उनका शोषण किया। ईमारती लकड़ी के लिए पेड़ों को काटा गया। वनभूमि का उपयोग चाय, रबर और कॉफी के बागानों के लिए किया जाता था। वन क्षेत्रों में रेलवे लाइन और सड़कों का निर्माण किया गया। माल के परिवहन के लिए जंगल से समुद्री तटों तक के मार्ग बनाए गए।

निजी संपत्ति की अवधारणा 1793 में अंग्रेज़ों की स्थायी बसावट और 'जमींदारी' प्रणाली की स्थापना के साथ शुरू हुई जिसने अंग्रेज़ों द्वारा राजस्व की उगाही के उद्देश्य से सामंती जमींदारों को आदिवासी क्षेत्रों सहित विशाल क्षेत्रों का नियंत्रण प्रदान किया। इमारती लकड़ी की अर्थव्यवस्था और अन्य राजस्व संसाधनों के लिए आदिवासी समुदायों को जंगल से ज़बरन बेदखल करना शुरू किया गया था। भारतीय वन अधिनियम 1927 में लागू हुआ जिसमें यह प्रावधान था कि कोई भी वन क्षेत्र या बंजर भूमि, जो निजी स्वामित्व में नहीं थी, उसे आरक्षित क्षेत्रों के रूप में चिह्नित किया जा सकता था। भारत में वनों और बड़े क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासी समुदायों के लिए कोई विशेष प्रणाली या निपटान अधिकार नहीं बनाए गए थे और इसके लिए सर्वेक्षण नहीं किया गया था। कृषि में संलग्न आदिवासी लोग बिना आधिकारिक भूमि स्वामित्व के खेती करते रहे। इस प्रणाली के तहत आदिवासियों और गैर–आदिवासियों द्वारा समान रूप से वृक्षों की कटाई, शिकार, चारागाह खोजने या कृषि की प्रथा ने अतिक्रमण को बढ़ावा दिया। ब्रिटिश कानून और आक्रामक नीतियों ने भारत में आदिवासी रिहायशी क्षेत्रों को प्रभावित किया विशेष रूप से उनकी आजीविका को, जो स्वतंत्र भारत की सरकार के लिए एक चुनौती बन गई।

स्वतंत्रता उपरांत स्थिति

भारत के संविधान ने अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और समग्र विकास के लिए कई प्रावधान किए हैं। 1952 में तत्कालीन सरकार की पंचशील नीति ने आदिवासी कल्याण हेतु प्रशासन के मार्गदर्शन के लिए पाँच सिद्धांत तय किए हैं जो निम्नलिखित हैं:

- आदिवासियों को उनकी प्रतिभा के अनुसार विकास करने देना चाहिए।
- भूमि और जंगल में आदिवासियों के अधिकारों का सम्मान किया जाना चाहिए।
- बहुत से बाहरी लोगों को शामिल किए बिना जनजातीय टीमों को प्रशासन और विकास के कार्यों के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।
- आदिवासी क्षेत्रों की सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाओं के विरुद्ध जाए बिना जनजातीय विकास किया जाना चाहिए।
- आदिवासी विकास का मूल्यांकन का आधार उनके जीवन की गुणवत्ता होना चाहिए न कि खर्च किया गया धन।

आजीविका और अन्य प्रासंगिक मुद्दे

संविधान के पंचशील अनुच्छेद 275 को साकार करने में अनुसूचित क्षेत्रों में रहने वाली आदिवासी आबादी के सामाजिक और आर्थिक कल्याण के कार्यक्रमों के लिए एक विशेष वित्तीय अनुदान प्रदान किया जाना अनिवार्य है। इस अनुच्छेद के तहत केंद्र सरकार ने पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि के लिए 12 करोड़ रुपये का प्रावधान किया। यह स्थिर कृषि जीवन या सीढ़ीदार खेती और समुदायों को लाभ पहुँचाने के लिए कृषि के उन्नत तरीकों को अपनाने के लिए था।

दूसरी पंचवर्षीय योजना आदिवासी क्षेत्रों में विकास कार्यक्रमों पर केंद्रित थी जिन्हें चार शीर्षों के तहत वर्गीकृत किया गया था– (क) संचार (ख) शिक्षा और संस्कृति, (ग) आदिवासी अर्थव्यवस्था का विकास तथा (घ) स्वास्थ्य, आवास और जल आपूर्ति। आदिवासी विकास के लिए लगभग 47 करोड़ रुपये आवंटित किए गए। राज्यों को लगभग 36,600 एकड़ भूमि के विकास, 6,570 एकड़ वन भूमि के पुनरुज्जीवन, कृषि उपकरणों और अच्छी नस्ल के सांडों का वितरण, लगभग 4,000 व्यक्तियों को विभिन्न शिल्पों में प्रशिक्षण और 825 कुटीर उद्योग केंद्रों की स्थापना के लिए भी सहायता दी गई।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में झूम खेती में लगे व्यक्तियों के आर्थिक पुनर्वास, सहकारी समितियों के माध्यम से वनों का काम करने और आदिवासी कृषकों और कारीगरों की ऋण आवश्यकताओं को पूरा करने और उनके उत्पादों के विपणन के लिए बहुउद्देश्यीय सहकारी समितियों के गठन की परिकल्पना की गई। कई कार्यक्रम चलाए गए जिनमें भूमि सुधार, मृदा संरक्षण, लघु सिंचाई, उन्नत बीजों की आपूर्ति, खाद, उपकरण और बैल, प्रशिक्षण के लिए सुविधाओं का प्रावधान, उन्नत कार्य प्रणालियों का प्रदर्शन, मवेशियों, मत्स्य पालन, मुर्गीपालन, सुअर पालन और भेड़–पालन का विकास, प्रशिक्षण प्रदान करने वाले उत्पादन केन्द्रों का गठन, कुटीर उद्योगों में लगे ग्राम कारीगरों को सहायता और परामर्श का प्रावधान शामिल है।

चौथी पंचवर्षीय योजना में अनुसूचित जनजातियों की आर्थिक बेहतरी के लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्यक्रम जनजातीय विकास खंडों का था जो दूसरी पंचवर्षीय योजना में जनजातीय आबादी की बड़ी संख्या वाले क्षेत्रों के गहन विकास से शुरू किया गया था। इसलिए कृषि उत्पादन और पशुधन उत्पादन बढ़ाने के कार्यक्रमों

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. * Delhi *

को प्राथमिकता मिली। भूमिहीन मजदूरों की जीविका व्यवस्था में विविधता लाने और उनके आधुनिकीकरण के कार्यक्रमों को भी प्राथमिकता दी गई। आर्थिक उत्थान की योजनाओं जैसे भूमि आवंटन, कृषि एवं पशुपालन के विकास हेतु हल, बैल एवं उन्नत बीज खरीदने के लिए अनुदान, मृदा संरक्षण, भूमि उपनिवेशीकरण, लघु सिंचाई एवं सहकारी समितियों के संगठन एवं विकास की योजनाएं जारी रखी गई हैं।

पाँचवीं/पंचवर्षीय योजना के दौरान 16 राज्यों और 2 केंद्रशासित प्रदेशों के लिए जनजातीय उप–योजना को शामिल किया गया था। इन कार्यक्रमों को राज्य योजनाओं और केंद्रीय सहायता के प्रावधानों के माध्यम से वित्तपोषित किया गया था। 145 एकीकृत जनजातीय विकास परियोजनाओं में से लगभग 40 को तैयार किया गया और इसके लिए योजना के पहले तीन वर्षों के दौरान 65 करोड़ रुपये खर्च किए गए।

छठी पंचवर्षीय योजना (1980–85) की प्रमुख गतिविधियों में गरीबी के खिलाफ चौतरफा युद्ध और संसाधन–चिन्हित क्षेत्रों में विकास के प्रयासों की परिकल्पना शामिल थी जिसके लिए संसाधनों को i) राज्य योजनाओं से परिव्यय; (ii) केंद्रीय मंत्रालयों से निवेश (iii) विशेष केंद्रीय सहायता और (iv) संस्थागत वित्त के माध्यम से जुटाया गया था। ऋण और विपणन सुविधाएं प्रदान करने के लिए बड़े आकार की बहुउद्देशीय सोसायटियों (एलएएमपीएस) की स्थापना की गई थी। सेवाओं की व्यवस्था के प्रावधान द्वारा 62 ज़िलों के 233 प्रखंडों में झूम खेती करने वाले आदिवासी काश्तकारों के पुनर्वास के लिए कदम उठाए गए।

सातवीं पंचवर्षीय योजना में लोक और आदिवासी कलाओं के विकास पर ध्यान दिया गया विशेष रूप से वे जो विलुप्तप्राय हो गई थी जैसे कि हिमालयी क्षेत्रों की लोककला जिन पर पारिस्थितिकी और सांस्कृतिक रूप से संकट मंडरा रहा था। इन क्षेत्रों में कार्यरत स्वैच्छिक संगठनों की मदद के माध्यम से इन्हें सम्बल मिला। पूरक पोषण कार्यक्रम (एसएनपी) और मध्याह्न भोजन कार्यक्रम (एमडीएम) जैसी प्रत्यक्ष पोषण हस्तक्षेप योजनाओं के तहत बच्चों, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं पर विशेष ध्यान दिया गया। इस अवधि के दौरान अपनाई गई जनजातीय उप–योजना (टीएसपी) रणनीति में निम्नलिखित शामिल हैं:

- राज्य में विकासखंडों को चिन्हित करना जहां जनजातीय आबादी बहुसंख्यक है और विकास के लिए एकीकृत और परियोजना–आधारित दृष्टिकोण अपनाने की दृष्टि से उनका एकीकृत जनजातीय विकास परियोजनाओं (आईटीडीपी) में गठन;
- टीएसपी के लिए धनराशि का निर्धारण और केंद्रीय और राज्य योजना क्षेत्रीय परिव्यय और वित्तीय संस्थानों से धन का प्रवाह सुनिश्चित करना; तथा
- जनजातीय क्षेत्रों में उपयुक्त प्रशासनिक ढांचे का निर्माण और उचित कार्मिक नीतियों को अपनाना।

जनजातीय क्षेत्र में बड़े आकार की बहुउद्देशीय सोसायटियों (एलएएमपीएस) को निदेशक मंडल और अन्य कार्यकारी निकायों में उनके जन आधार के विस्तार के माध्यम से मज़बूत किया गया ताकि उन्हें जनजातीय उत्पादों की बिक्री और विपणन, उपभोक्ता आवश्यकताओं और ऋण व्यवस्था में शोषण के उन्मूलन के लिए प्रभावी माध्यम बनाया जा सके। राज्य–स्तरीय जनजातीय विकास निगमों की गतिविधियों के समन्वय के लिए राष्ट्रीय स्तर के जनजातीय विपणन संगठन की स्थापना की गई थी जिसे पूर्ण रूप से प्रभावी बनाने की आवश्यकता है। लाभार्थी–प्रतिभागियों के साथ निकट परामर्श से योजना को अंजाम दिया जाएगा और परियोजना रिपोर्ट तैयार की जाएगी। आईटीडीपी, आदिवासी–बहुल इलाकों और आदिम आदिवासी समूहों के लिए वैज्ञानिक परियोजना रिपोर्ट प्राकृतिक संसाधन उपलब्धता, लोगों के पारम्परिक व्यवसायों और कौशल तथा एक उचित रूप से तैयार विकास परिप्रेक्ष्य के संदर्भ में बनायी जाएगी।

आठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास परिसंघ ने राज्य जनजातीय विकास सहकारी निगमों के माध्यम से लघु वनोपज के संग्रह और विपणन का प्रबंधन इस तरह से करना शुरू कर दिया था ताकि आदिवासियों को उचित रिटर्न सुनिश्चित हो सके। उपभोग और उत्पादन उद्देश्यों के लिए ऋण तक सीमित पहुंच ने साहूकारों/व्यापारियों पर अनुसूचित जनजातियों की निर्भरता को बढ़ा दिया जिसके कारण (अ) साहूकारों और व्यापारियों को ऋण देनदारियों की अदायगी के लिए विकासात्मक लाभों में हेराफेरी हुई और (ब) भूमि या अन्य संपत्ति के रूप में संसाधन आधार की क्षति हुई। अतः आठवीं पंचवर्षीय योजना का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य था बैंकों और सहकारी संस्थाओं से अधिकाधिक ऋण उपलब्ध कराना।

नौवीं पंचवर्षीय योजना अवधि के दौरान देश में विशेष रूप से जनजातीय विकास कार्य के लिए जनजातीय कार्य मंत्रालय की स्थापना की गई थी। जनजातीय कार्य मंत्रालय आदिवासियों के लिए स्थायी आजीविका के अवसर पैदा करने के लिए कई योजनाएं लागू कर रहा है। इसी प्रकार राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में पृथक जनजातीय कल्याण विभाग स्थापित किए गए।

अगली तीन योजनाएं (10वीं, 11वीं और 12वीं) भारत में आदिवासियों के कल्याण के लिए गठित जनजातीय मामलों के मंत्रालय के माध्यम से लागू की गईं। भारत में आदिवासियों के लिए आजीविका के अवसरों को बढ़ावा देने के लिए लागू किए गए कुछ प्रमुख कार्यक्रमों का उल्लेख नीचे किया गया है:

1) **जनजातीय उत्पादों/उपज के विकास और विपणन के लिए संस्थागत सहायता:** इस योजना के तहत राज्य जनजातीय विकास सहकारी निगमों (एसटीडीसीसी) और भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास महासंघ

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

(ट्राईफेड) के लिए सहायता अनुदान जारी किया जाता है। इसका प्रयोजन विभिन्न जनजातियों के लोगों को उत्पादन, उत्पाद विकास, पारम्परिक विरासत के संरक्षण को व्यापक सहायता देना, आदिवासियों के वन और कृषि उत्पाद दोनों के लिए सहायता प्रदान करना, उपरोक्त गतिविधियों को चलाने के लिए संस्थानों की सहायता करना, बेहतर बुनियादी ढांचा प्रदान करना, डिज़ाइनों का विकास करना, कीमतों और उत्पादों को खरीदने वाली एजेंसियों के बारे में जानकारी का प्रसार करना, स्थायी विपणन के लिए सरकारी एजेंसियों की सहायता करना और इस प्रकार एक उचित मूल्य व्यवस्था सुनिश्चित करना है।

2) **न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) के माध्यम से लघु वनोपज (एमएफपी) का विपणन और एमएफपी के लिए मूल्य शृंखला का विकास:** यह योजना अनुसूचित जनजातियों और अन्य परम्परागत वन निवासियों को सुरक्षा तंत्र और सहायता प्रदान करती है जिनकी आजीविका वनोपज के संग्रह और बिक्री पर निर्भर करती है। यह योजनाएं स्थानीय स्तर पर आवश्यक बुनियादी ढांचे के साथ–साथ उनके द्वारा एकत्रित एमएफपी के लिए मुख्य रूप से न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) के माध्यम से लघु वनोपज (एमएफपी) संग्रहकर्ताओं के लिए उचित रिटर्न सुनिश्चित करती हैं।

3) **वन धन विकास कार्यक्रम (वीडीवीके):** इस योजना का उद्देश्य न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) और लघु वन उत्पादों के लिए मूल्य शृंखला का विकास करना है जिसका प्रयोजन वन सम्पदा का उपयोग करके आदिवासियों के लिए आजीविका सृजन सुनिश्चित करना है। इसका मुख्य उद्देश्य आदिवासियों के पारम्परिक ज्ञान और कौशल सेट का दोहन करना है, प्रौद्योगिकी और सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) को जोड़कर प्रत्येक चरण में उन्नत करना है और जनजातीय ज्ञान को एक लाभदायक आर्थिक गतिविधि में परिवर्तित करना है। यह पहल आदिवासी संग्रहकर्ताओं के लिए आजीविका सृजन और उन्हें उद्यमियों में बदलने का लक्ष्य रखती है। जनजातीय ज़िलों में जो अधिकांशतः वनाच्छादित हैं, आदिवासी समुदाय के स्वामित्व वाले वन धन विकास केंद्र (वीडीवीके) स्थापित किए जाएंगे है।

4) **राष्ट्रीय/राज्य अनुसूचित जनजाति वित्त और विकास निगम (एनएसटीएफडीसी/एसटीएफडीसी) को इक्विटी सहायता:** राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति वित्त और विकास निगम (एनएसटीएफडीसी) कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 25 के तहत लाइसेंस प्राप्त एक सरकारी गैर–लाभकारी कम्पनी है जो अनुसूचित जनजातियों को उनके आर्थिक और शैक्षिक विकास के लिए रियायती वित्तीय सहायता प्रदान करती है। यह स्वयंसहायता समूहों (एसएचजी) की सहायता करता है और 25 लाख रुपये प्रति एसएचजी तक की इकाई लागत वाली परियोजनाओं के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करता है। यह परियोजना की लागत का 90 प्रतिशत तक प्रदान करता है बशर्ते प्रति सदस्य ऋण 50,000 रुपये से अधिक न हो। यह परियोजना से संबंधित परिसंपत्तियों की खरीद और कार्यशील पूंजी के लिए ट्राइफेड के पैनल में शामिल जनजातीय कारीगरों को रियायती वित्त प्रदान करता है।

एनएसटीएफडीसी 25 लाख रुपये प्रति यूनिट तक की व्यावहारिक परियोजनाओं के लिए सावधि ऋण भी प्रदान करता है। इस योजना के तहत परियोजना की लागत का 90 प्रतिशत तक वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है और शेष राशि को सब्सिडी/प्रवर्तकों के योगदान/मार्जिन राशि के माध्यम से पूरा किया जाता है। ब्याज दर 5 लाख रुपये तक 6 प्रतिशत प्रति वर्ष, 10 लाख रुपये तक 8 प्रतिशत प्रति वर्ष और 10 लाख रुपये से अधिक पर 10 प्रतिशत प्रति वर्ष है। आदिवासी महिला सशक्तीकरण योजना (एएमएसवाई) अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के आर्थिक विकास के लिए एक विशेष योजना है जिसके तहत एनएसटीएफडीसी एक लाख रुपये तक की लागत वाली परियोजना के लिए 4 प्रतिशत प्रति वर्ष की ब्याज दर पर 90 प्रतिशत तक ऋण प्रदान करता है। एनएसटीएफडीसी ने अपनी स्थापना के बाद से लगभग 1,900 करोड़ रुपये संवितरित किए हैं। हाल के दिनों में एनएसटीएफडीसी ने अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक कौशल विकास के लिए आदिवासी शिक्षा ऋण योजना (एएसआरवाई), जागरूकता सृजन आदि जैसी नई योजनाएं शुरू की हैं।

ये योजनाएं इस तथ्य को उजागर करती हैं कि सरकार देश में आदिवासी समुदायों की आजीविका के विकास के माध्यम से समावेशी सशक्तीकरण के लिए प्रतिबद्ध है।

संदर्भ

1) प्रथम पंचवर्षीय योजना से 12वीं पंचवर्षीय योजना तक पंचवर्षीय योजना दस्तावेज़, योजना आयोग, भारत सरकार।
2) जनजातीय मामलों के मंत्रालय की 2017–18 से 2021–22 की वार्षिक रिपोर्ट।
3) जनगणना 2011 और जनगणना 2001, जनसांख्यिकीय आँकड़े।
4) राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति वित्त एवं विकास निगम (एनएसटीएफडीसी) की 2017–18 से 2020–21 की वार्षिक रिपोर्ट।

(डॉ मुनीराजू एस बी सामाजिक न्याय एवं सशक्तीकरण वर्टीकल, नीति आयोग, भारत सरकार में डिप्टी एडवाइज़र और रामराव मुंडे वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी हैं। लेख में व्यक्त विचार निजी हैं।)

ई–मेल: **rn.mundhe@gov.in, mraju.sb@gov.in**

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

आय सृजन गतिविधियों के लिए रियायती ऋण

राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति वित्त और विकास निगम (एनएसटीएफडीसी) जनजातीय कार्य मंत्रालय के तहत एक सार्वजनिक उपक्रम है जो योजनाबद्ध मानदंडों के अनुसार आय सृजन गतिविधियों/स्वरोज़गार के लिए पात्र अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों को रियायती ऋण प्रदान करता है। एनएसटीएफडीसी की योजनाएं पूरे देश में लागू हैं। एनएसटीएफडीसी की प्रमुख योजनाओं का विवरण नीचे दिया जा रहा है:

सावधि ऋण योजना

एनएसटीएफडीसी प्रति यूनिट 50 लाख रुपये तक की लागत वाली व्यवहार्य परियोजनाओं के लिए सावधि ऋण प्रदान करता है। इस योजना के तहत, परियोजना की लागत के 90 प्रतिशत तक वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है और शेष राशि सब्सिडी/प्रवर्तक योगदान/मार्जिन मनी के माध्यम से पूरी की जाती है।

आदिवासी महिला सशक्तीकरण योजना (एएमएसवाई): यह अनुसूचित जनजाति महिलाओं के आर्थिक विकास के लिए एक विशेष योजना है। इस योजना के तहत, एनएसटीएफडीसी 2 लाख रुपये तक की लागत वाली परियोजनाओं के लिए 90 प्रतिशत तक ऋण प्रदान करता है। इस योजना के तहत वित्तीय सहायता 4 प्रतिशत प्रति वर्ष की अत्यधिक रियायती ब्याज दर पर दी जाती है।

स्वयंसहायता समूहों के लिए सूक्ष्म ऋण योजना (एमसीएफ): यह अनुसूचित जनजाति सदस्य की छोटी ऋण आवश्यकता को पूरा करने के लिए स्वयंसहायता समूहों के लिए एक विशेष योजना है। इस योजना के तहत, निगम प्रति सदस्य 50,000 रुपये तक और अधिकतम 5 लाख रुपये प्रति स्वयंसहायता समूह (एसएचजी) तक ऋण प्रदान करता है।

आदिवासी शिक्षा ऋण योजना (शिक्षा ऋण योजना): यह एक शिक्षा ऋण योजना है जो भारत में अनुसूचित जनजाति के छात्रों को शोधकार्य (पीएचडी) सहित तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा के लिए खर्च को पूरा करने में सक्षम बनाती है। इस योजना के तहत, निगम 6 प्रतिशत प्रति वर्ष की रियायती ब्याज दर पर प्रति पात्र परिवार को 10 लाख रुपये तक की वित्तीय सहायता प्रदान करता है। अधिस्थगन अवधि (मोरेटोरियम पीरियड) के दौरान अर्थात् पाठ्यक्रम की अवधि प्लस कोर्स पूरा होने के एक वर्ष बाद या नौकरी मिलने के छह महीने बाद, जो भी पहले हो, में पात्र छात्र को मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार से ब्याज सब्सिडी मिलेगी।

अनुसूचित जनजाति (एसटी) उद्यमियों के लिए मार्जिन मनी सपोर्ट योजना

भारत सरकार की स्टैंडअप इंडिया योजना के तहत परियोजनाओं के वित्तपोषण के लिए, दिसंबर 2020 में 'एसटी उद्यमियों के लिए मार्जिन मनी सपोर्ट स्कीम' नामक एक अलग योजना तैयार की गई है। इस योजना के तहत, पात्र अनुसूचित जनजाति उद्यमियों को स्टैंडअप इंडिया योजना के अंतर्गत कुल परियोजना लागत के 15 प्रतिशत की सीमा तक एनएसटीएफडीसी की वित्तीय सहायता प्राप्त करने की अनुमति है। एनएसटीएफडीसी कार्यान्वयन एजेंसियों के माध्यम से अपने ऋण का विस्तार करता है। जनजातीय कार्य मंत्रालय के संज्ञान में ऐसा कोई उदाहरण नहीं आया है जहां एनएसटीएफडीसी ने अपने (एनएसटीएफडीसी) ऋण संवितरण मानदंडों को पूरा करने वाली कार्यान्वयन एजेंसियों के किसी भी प्रस्ताव को खारिज कर दिया हो। एनएसटीएफडीसी, समय–समय पर अपनी कार्यान्वयन एजेंसियों के सहयोग से एनएसटीएफडीसी और इसकी योजनाओं के बारे में जानकारी के प्रसार के लिए जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करता रहता है।

एनएसटीएफडीसी फंड की उपलब्धता के आधार पर अनुसूचित जनजाति की आबादी के अनुपात में राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों को धन के वितरण का लक्ष्य आवंटित करता है। पिछले तीन वित्तीय वर्षों के दौरान, एनएसटीएफडीसी ने संबंधित वर्षों के लिए किए गए अनुमानित आवंटन से अधिक धनराशि का वितरण किया, जो ऋण आवेदनों को तैयार करने में जागरूकता कार्यक्रमों की प्रभावशीलता को दर्शाता है।

यह जानकारी जनजातीय कार्य राज्य मंत्री रेणुका सिंह सरुता ने 4 अप्रैल, 2022 को लोकसभा में दी।

जनजातीय शिक्षा के बढ़ते कदम

–जे.पी. पांडेय

आदिवासी जनजीवन सामान्यतः अपनी विशिष्ट संस्कृति और परम्पराओं के लिए जाना जाता है। आधुनिक शिक्षा का प्रसार और सभी तक पहुँच ही आदिवासियों को जीवन में समाज की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए अत्यावश्यक है। भारतीय शिक्षा प्रणाली सभी के लिए शैक्षिक अवसर या शिक्षा की गुणवत्ता में समानता के आश्वासन पर आधारित है। शिक्षा उनकी समृद्धि, सफलता और जीवन में सुरक्षा भी निर्धारित करेगी।

मानव संसाधन विकास के लिए शिक्षा सबसे महत्वपूर्ण साधन है क्योंकि यह बच्चों के बुनियादी विचारों, आदतों और दृष्टिकोणों को अच्छी तरह से संतुलित व्यक्तियों के निर्माण की दृष्टि से ढालने में एक प्रमुख भूमिका निभाता है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने आदिवासियों के लिए नई तालीम की आवश्यकता को बहुत पहले से ही महसूस किया था। गुजरात में आश्रमशालाओं की शुरुआत 1920 में एक राष्ट्रीय शाला के साथ हुई थी जहां गुजरात विद्यापीठ और अन्य शैक्षणिक संस्थानों के साथ मिलकर ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में शिक्षा का प्रसार किया गया। आज़ादी के बाद आश्रमशालाओं की अवधारणा को बढ़ावा दिया गया ताकि दूरदराज के पहाड़ी और आदिवासी क्षेत्रों के छात्रों को भी बेहतर शिक्षा मिल सके। शिक्षा मंत्रालय, महिला एवं बाल विकास, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता और जनजातीय मामलों के मंत्रालयों द्वारा अनुसूचित जनजाति के बच्चों के लिए शिक्षा और आवासीय सुविधाएं मुहैया करायी जाती हैं।

भारत में आदिवासी जनजातियाँ एवं अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता

भारत में आमतौर पर आदिवासी जनजातियों को देश का मूल निवासी माना जाता है। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने एक बार कहा था कि "भारत की आदिवासी जनजातियाँ देश की सबसे पुरानी निवासी हैं। भारत में लगभग 550 जनजातियाँ हैं। 1951 की जनगणना के अनुसार देश की कुल जनसंख्या में आदिवासी समुदाय 5.6 प्रतिशत था जो 2011 में बढ़कर 8.6 प्रतिशत हो गया। 2011 में भारत में अनुसूचित जनजातियों की संख्या 10.43 करोड़ है जिसमें लगभग 9.38 करोड़ लोग ग्रामीण एवं 1.04 करोड़ शहरी क्षेत्रों में रहते हैं। अनुसूचित जनजाति ग्रामीण क्षेत्रों की कुल जनसंख्या का 11.3 प्रतिशत और शहरी क्षेत्रों का 2.8 प्रतिशत है।

केरल के वायनाड ज़िले में डिजिटल माध्यम से शिक्षा

2011 की जनगणना के अनुसार लक्षद्वीप (94.8 प्रतिशत), मिज़ोरम (94.4 प्रतिशत), नगालैंड (86.5 प्रतिशत), मेघालय (86.1 प्रतिशत), अरुणाचल प्रदेश (68.8 प्रतिशत) अनुसूचित जनजातियों के अधिकतम अनुपात वाले राज्य और केंद्रशासित प्रदेश हैं। जबकि जनसंख्या के हिसाब से सर्वाधिक आदिवासी आबादी मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, गुजरात, झारखंड और छत्तीसगढ़ जैसे राज्यों में निवास करती है।

2011 की जनगणना के अनुसार जहां पूरे देश की साक्षरता दर 72.99 प्रतिशत है, वहीं अनुसूचित जनजातियों में यह मात्र 59 प्रतिशत है। अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता की दर सबसे अधिक मिज़ोरम (91.7 प्रतिशत), लक्षद्वीप (91.7 प्रतिशत)

वर्तमान में आदिवासी शिक्षा की स्थिति

आदिवासी शिक्षा की स्थिति को उनके सम्पूर्ण नामांकन, सकल नामांकन अनुपात, ड्रॉप आउट और आदिवासी शिक्षा के हस्तक्षेपों पर किए जा रहे खर्च के रूप में चार्ट द्वारा समझा जा सकता है। स्रोत: UDISE 2020–21 (प्रोविज़नल)

कुल नामांकन 2020–21 (राष्ट्रीय परिदृश्य)

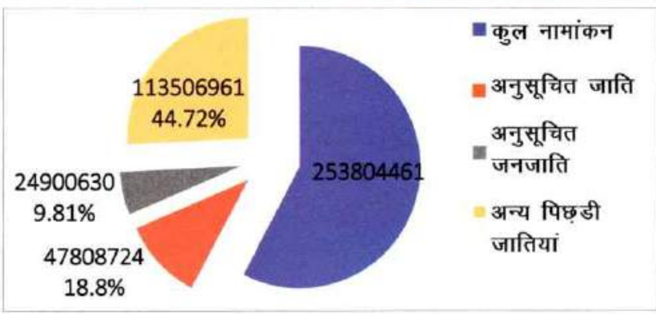

कुल नामांकन अनुपात (GER) रूझान (प्रारंभिक दर)

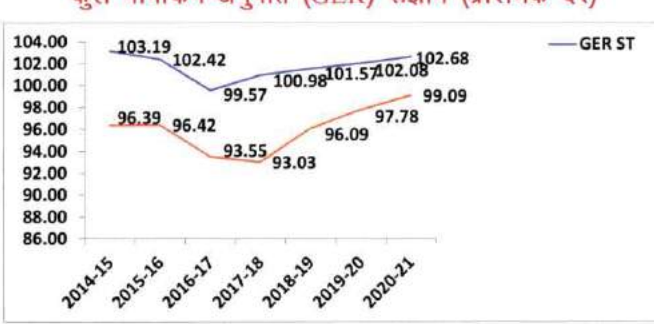

सभी के लिए और अनु. जनजाति की वार्षिक औसत ड्रापआउट दर (सेकेंडरी स्तर)

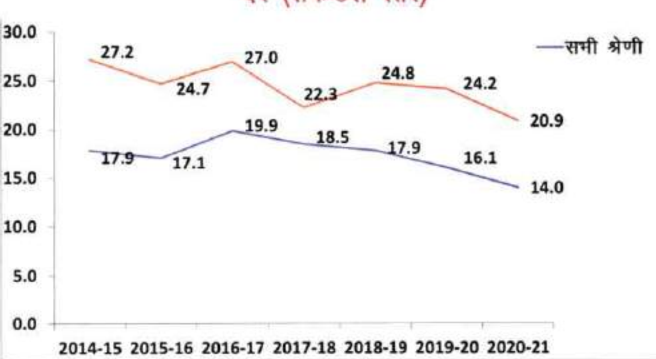

और आंध्र प्रदेश में सबसे कम (49.2 प्रतिशत) है। इस प्रकार स्पष्ट है कि न केवल आदिवासी साक्षरता राष्ट्रीय औसत से काफी कम है वरन उनमें राज्यवार भी भारी असमानता है।

आदिवासी जनजातियों के लिए संवैधानिक प्रावधान

भारतीय संविधान मूलाधिकारों के तहत अनुच्छेद 29 प्रत्येक नागरिक को अपनी भाषा, लिपि या संस्कृति को संरक्षित करने के अधिकार की रक्षा करता है, और अनुच्छेद 30 (1) में कहा गया है

कुल नामांकन अनुपात (GER) हायर सेकेन्डरी स्तर

Elite Academy for Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

सभी के लिए तथा अनु. जनजाति के लिए वार्षिक औसत ड्रापआउट दर (प्राइमरी स्तर)

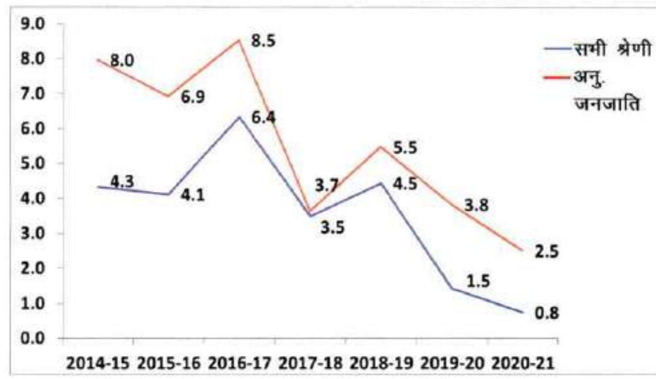

पिछले 3 वर्षों के लिए अनु. जनजाति कम्पोनेंट (STC) के तहत बजट और व्यय हेतु आवंटन

कि अल्पसंख्यक समुदायों को अपनी संस्थाओं को स्थापित करने और प्रबंधित करने का अधिकार है।

अनुच्छेद 21ए को संविधान (86वां संशोधन) अधिनियम, 2002 द्वारा शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार बनाया गया। शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 छह से चौदह वर्ष की आयु के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने की गारंटी देता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और जनजातीय शिक्षा

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में शैक्षणिक रूप से पिछड़े ब्लॉकों (ईबीबी), एलडब्ल्यूई, विशेष फोकस वाले ज़िलों (एसएफडी) और 112 आकांक्षी ज़िलों को वरीयता देकर वहाँ विशेष सुविधाएं देने

का प्रावधान किया गया है। साथ ही, अनुसूचित जनजातियों के बच्चों को गुणवत्ता शिक्षा देने के लिए निम्न प्रावधान किए गए हैं–

- 3 वर्ष से ऊपर के सभी बच्चों को आरंभिक शिक्षा सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति में आदिवासी–बहुल क्षेत्रों की आश्रमशालाओं में चरणबद्ध तरीके से वैकल्पिक स्कूली शिक्षा के सभी प्रारूपों में ईसीसीई की शुरुआत की जाएगी।
- एनईपी पैरा 4.16 के अनुसार देश का कक्षा 6–8 में प्रत्येक छात्र 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल के तहत 'भारत की भाषाएँ' पर एक मनोरंजक परियोजना/गतिविधि में भाग लेगा। इससे भारतीय भाषाओं विशेष रूप से आदिवासी भाषाओं की प्रकृति और संरचना की समझ विकसित होगी।
- एनईपी पैरा 6.2.3 में कहा गया है कि आदिवासी समुदायों और अनुसूचित जनजातियों के बच्चों को विभिन्न ऐतिहासिक और भौगोलिक कारकों के कारण कई स्तरों पर नुकसान का सामना करना पड़ता है। आदिवासी समुदायों के बच्चे अक्सर अपनी स्कूली शिक्षा को सांस्कृतिक और अकादमिक रूप से अप्रासंगिक और अपने जीवन के लिए विदेशी पाते हैं। आदिवासी समुदायों के बच्चों के उत्थान के लिए कई कार्यक्रम और स्कूली शिक्षा को सांस्कृतिक और अकादमिक रूप से प्रासंगिक बनाने के लिए विशेष तंत्र विकसित करने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया गया है।
- एनईपी पैरा 6.17 के अनुसार रक्षा मंत्रालय के तत्वावधान में, राज्य सरकारें आदिवासी–बहुल क्षेत्रों में स्थित अपने माध्यमिक और उच्च माध्यमिक विद्यालयों में एनसीसी विंग खोलने को प्रोत्साहित कर सकती हैं। यह छात्रों की प्राकृतिक प्रतिभा और अद्वितीय क्षमता का दोहन करने में सक्षम होगा, जो बदले में उन्हें रक्षा बलों में एक सफल कैरियर की आकांक्षा करने में मदद करेगा।
- एनईपी शिक्षकों को शिक्षा और शिक्षण पद्धति के अद्यतन ज्ञान के साथ भारतीय मूल्यों, भाषाओं, ज्ञान, लोकाचार सहित आदिवासी परम्पराओं के प्रति जागरूक होने की आवश्यकता पर बल देती है।
- एनईपी में शास्त्रीय, जनजातीय और लुप्तप्राय भाषाओं सहित सभी भारतीय भाषाओं को संरक्षित और बढ़ावा देने के प्रयास पर सिफारिश की गई है।

Education Academy For Training Pvt. Ltd. Delhi

आदिवासी समाज में शिक्षा की चुनौतियाँ

अनुसूचित जनजातियां अभी भी ऐतिहासिक रूप से सामाजिक–आर्थिक बाधाओं के कारण शिक्षा की सार्वभौमिक पहुँच से बाहर रही हैं। अंधविश्वास, अनेकानेक रूढ़ियों, बालिका शिक्षा के प्रति परम्परागत रूढ़िवादिता, आर्थिक गरीबी एवं पिछड़ापन, बालश्रम, बाल विवाह आदि अनेक आर्थिक और सामाजिक कारणों एवं अन्य सांस्कृतिक और भौगोलिक कारकों की वजह से आदिवासी समुदायों के बच्चों की शैक्षिक स्थिति में अवरोध बना हुआ है। यद्यपि हाल के वर्षों में उठाए गए अनेक प्रभावकारी कदमों औए हस्तक्षेपों के बावजूद, जनजातीय आबादी का नामांकन और प्रतिधारण दर के साथ–साथ सीखने के परिणाम भी देश में सबसे कम हैं, जिसके लिए सभी स्तरों पर प्रयास की ज़रूरत है।

> देश के पंद्रहवें राष्ट्रपति के रूप में आदरणीया द्रौपदी मुर्मु जी द्वारा शपथ लिया जाना भारतीय गणतंत्र की एक अविस्मरणीय घटना है। इससे न केवल संविधान में हमारी आस्था मज़बूत होती है कि देश में सभी नागरिकों के लिए समान अवसर हैं, बल्कि यह शिक्षा के महत्व को भी रेखांकित करता है। इसलिए अगर आदिवासी जनजातियों की स्थिति में सुधार होना है तो उनमें शिक्षा का प्रसार होना सबसे बड़ी आवश्यकता है। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी आदिवासियों के सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए उनमें आधुनिक शिक्षा के प्रसार और महत्व को महत्वपूर्ण मानते हैं।

भाषायी अवरोध जनजातीय बच्चों में शिक्षण अवरोध का प्रमुख कारण है। शैक्षिक अनुसंधान ने दिखाया है कि मातृभाषा शिक्षा का सबसे अच्छा माध्यम है। आदिवासी बच्चों का समावेश भाषा के मुद्दे पर महत्वपूर्ण रूप से निर्भर करता है। अपनी मातृभाषा में शिक्षा न मिल पाने के कारण आदिवासी बच्चों की रुचि कम हो जाती है जिससे ड्रॉप आउट का खतरा बढ़ जाता है। साथ ही, उच्च शिक्षा विशेषकर व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में भारतीय भाषाओं के माध्यम की उपलब्धता न होने के कारण यहाँ आदिवासी बच्चे या तो पहुँच ही नहीं पाते हैं या पाठ्यक्रम को बीच में ही छोड़ देते हैं।

आदिवासी बच्चों का समावेश सुनिश्चित करने के लिए और बहुभाषावाद को प्रोत्साहित करने के लिए जनजातीय बच्चों के लिए भाषायी शिक्षा और ब्रिज पाठ्यक्रम, स्थानीय भाषा में अध्यापन, उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करके स्थानीय भाषाओं में शैक्षिक सामग्री का विकास, जनजातीय–बहुल राज्यों में शैक्षणिक उपकरणों और शिक्षा सामग्री के विकास के लिए प्रशिक्षण, शैक्षणिक और अन्य तकनीकी सहायता प्रदान करने के लिए संसाधन केंद्रों की स्थापना, बहुभाषी शिक्षा में शिक्षकों का प्रशिक्षण, जनजातीय संस्कृतियों और प्रथाओं के लिए शिक्षकों का संवेदीकरण, पाठ्यचर्या और पाठ्य पुस्तकों में स्थानीय ज्ञान को शामिल करने एवं स्कूलों के भीतर सांस्कृतिक मेलजोल के लिए वातावरण बनाना होगा ताकि आदिवासी संस्कृतियों और प्रथाओं को पहचाना जा सके और आदिवासी बच्चों में हीनता और अलगाव की भावनाओं को मिटाया जा सके।

समग्र शिक्षा योजना

भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के स्कूली शिक्षा और साक्षरता विभाग (DoSEL) की समग्र शिक्षा योजना को राष्ट्रीय शिक्षा नीति की सिफारिशों के अनुरूप संरचित किया गया है। स्कूली शिक्षा के

Academy For Education & Training Pvt. Ltd. Delhi

सभी स्तरों पर लिंग और सामाजिक श्रेणी के अंतर को पाटना इस योजना के प्रमुख उद्देश्यों में से एक है। यह योजना अन्य के साथ लड़कियों, और अनुसूचित जनजाति से संबंधित बच्चों तक पहुँचती है। योजना नामांकन, प्रतिधारण और लिंग समानता के विभिन्न संकेतकों के साथ–साथ अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अल्पसंख्यक समुदायों की एकाग्रता पर प्रतिकूल प्रदर्शन के आधार पर पहचाने गए विशेष फोकस ज़िलों (एसएफडी) पर भी केंद्रित है।

समग्र शिक्षा सभी राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों जिसमें आदिवासी इलाके भी शामिल हैं, विभिन्न कार्यों जैसे शिक्षकों और स्कूल प्रमुखों का सेवाकालीन प्रशिक्षण, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर उपलब्धि सर्वेक्षण, अनुकूल शिक्षण परिवेश प्रदान करने हेतु प्रत्येक स्कूल को कम्पोज़िट स्कूल ग्रांट, पुस्तकालय अनुदान, खेल और शारीरिक गतिविधियां, राष्ट्रीय आविष्कार अभियान के लिए सहायता, आईसीटी और डिजिटल पहल, स्कूल नेतृत्व विकास कार्यक्रम, शैक्षणिक रूप से कमज़ोर छात्रों के लिए उपचारात्मक शिक्षण, पढ़े भारत बढ़े भारत आदि के लिए सहायता प्रदान करके शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करने पर ज़ोर देती है।

समग्र शिक्षा के अंतर्गत सरकारी स्कूलों में आठवीं कक्षा तक सभी अनुसूचित जनजाति के बच्चों के लिए वर्दी के दो सेट प्रदान किए जाते हैं और सभी बच्चों के लिए पाठ्यपुस्तकों का प्रावधान भी किया जाता है।

सभी केंद्रीय विद्यालयों में सभी नए दाखिलो में अनुसूचित जाति के लिए 15 प्रतिशत सीटें और अनुसूचित जनजाति के लिए 7.5 प्रतिशत सीटें आरक्षित हैं। वे अनुसूचित जनजाति के छात्र जो आरटीई कोटे के तहत प्रवेश लेते हैं, उन्हें शुल्क के भुगतान से छूट दी जाती है और उन्हें मुफ्त किताबें, वर्दी, स्टेशनरी और परिवहन भी प्रदान किया जाता है। साथ ही, जवाहर नवोदय विद्यालय में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बच्चों के पक्ष में सीटों के आरक्षण का भी प्रावधान है। केंद्रीय क्षेत्र की योजना 'राष्ट्रीय साधन–सह–योग्यता छात्रवृत्ति योजना' के तहत आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्गों के मेधावी छात्रों को आठवीं कक्षा में ड्रॉप आउट को रोकने और उन्हें माध्यमिक स्तर पर अध्ययन जारी रखने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है।

उच्च शिक्षा विभाग, उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए तीन योजनाओं को लागू कर रहा है – कॉलेज और विश्वविद्यालय के छात्रों के लिए छात्रवृत्ति की केंद्रीय क्षेत्र योजना (सीएसएसएस), जम्मू–कश्मीर के लिए विशेष छात्रवृत्ति योजना (जम्मू और कश्मीर के लिए एसएसएस) और केंद्रीय क्षेत्र ब्याज सब्सिडी योजना (सीएसआईएस)। इसके अलावा, यूजीसी आदिवासियों के लाभ के लिए पीजी छात्रवृत्ति, व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के लिए पीजी छात्रवृत्ति और एसटी उम्मीदवारों के लिए पोस्ट–डॉक्टरल फैलोशिप भी प्रदान करता है।

अन्य प्रमुख योजनाएँ

केंद्र और राज्य सरकारों ने देश की आदिवासी आबादी को शिक्षित करने के लिए कई योजनाएं और कार्यक्रम शुरू किए हैं। इनमें आश्रम विद्यालय, एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय, कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय, प्री–मैट्रिक छात्रवृत्ति और व्यावसायिक प्रशिक्षण केंद्र की स्थापना शामिल है।

कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय (केजीबीवी)

समग्र शिक्षा के तहत, कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय (केजीबीवी) एससी, एसटी, ओबीसी, अल्पसंख्यक और गरीबी रेखा से नीचे (बीपीएल) जैसे वंचित समूहों से संबंधित लड़कियों के लिए छठी से बारहवीं कक्षा तक के आवासीय विद्यालय हैं। केजीबीवी एक राज्य/संघ राज्य क्षेत्र के शैक्षिक रूप से पिछड़े ब्लॉकों (ईबीबी) में स्थापित किए जाते हैं जहां महिला ग्रामीण साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत से कम है।

इस योजना में उच्च प्राथमिक से वरिष्ठ माध्यमिक स्तर तक आवासीय विद्यालयों की स्थापना करके वंचित समूहों की लड़कियों को पहुँच और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने और जहां भी संभव हो, प्राथमिक से माध्यमिक और बारहवीं कक्षा तक लड़कियों के सुचारू संक्रमण को सुनिश्चित करने की परिकल्पना की गई है।

वर्तमान में 7,79,548 लड़कियों की क्षमता वाले कुल 5,615 केजीबीवी समग्र शिक्षा के तहत राज्यों को स्वीकृत किए गए हैं। इसमें से 4947 कार्यरत हैं जिसमें 1,69,343 एसटी (25.90 प्रतिशत) छात्राएँ शिक्षा प्राप्त कर रही हैं।

नेताजी सुभाष चंद्र बोस (एनएससीबी) आवासीय विद्यालय

नेताजी सुभाष चंद्र बोस (एनएससीबी) आवासीय विद्यालय और समग्र शिक्षा के तहत उन मुश्किल भौगोलिक इलाकों और सीमावर्ती क्षेत्रों में कम आबादी वाले, या पहाड़ी और घने जंगलों में बच्चों तक पहुँचने के लिए छात्रावास बनाए जाते हैं, जहां नए प्राथमिक या उच्च प्राथमिक विद्यालय खोलना और माध्यमिक/वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय व्यवहार्य नहीं होते हैं।

एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय (ईएमआरएस)

केंद्रीय जनजातीय मामलों के मंत्रालय द्वारा एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय की शुरुआत वर्ष 1997–98 में दूरस्थ क्षेत्रों में अनुसूचित जनजाति के बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के लिए की गई थी ताकि वे उच्च और व्यावसायिक शैक्षिक पाठ्यक्रमों में अवसरों का लाभ उठा सकें और विभिन्न क्षेत्रों में रोज़गार प्राप्त कर सकें। स्कूल न केवल अकादमिक शिक्षा पर बल्कि छात्रों के सर्वांगीण विकास पर ध्यान केंद्रित करते हैं। प्रत्येक स्कूल में 480 छात्रों की सामान्यतः क्षमता होती है, जो छठी से बारहवीं कक्षा के छात्रों को पूरा करता है।

वर्ष 2022 तक 50 प्रतिशत से अधिक एसटी आबादी वाले प्रत्येक ब्लॉक और कम से कम 20,000 आदिवासी जनसंख्या पर

एक एकलव्य विद्यालय होगा। एकलव्य विद्यालय नवोदय विद्यालय के समान होंगे और खेल एवं कौशल विकास में प्रशिक्षण प्रदान करने के अलावा स्थानीय कला और संस्कृति के संरक्षण के लिए विशेष सुविधाएं होंगी।

एकलव्य मॉडल डे बोर्डिंग स्कूल (ईएमडीबीएस)

जिन उप–ज़िलों में अनुसूचित जनजाति की आबादी का घनत्व 90 प्रतिशत या उससे अधिक होने पर, एकलव्य मॉडल दिवस बोर्डिंग स्कूल (ईएमडीबीएस) को प्रायोगिक आधार पर स्थापित करने का प्रस्ताव है ताकि अनुसूचित जनजाति के छात्रों के लिए अतिरिक्त अवसर प्रदान किए जा सकें।

आकांक्षी ज़िला कार्यक्रम

जनवरी 2018 में प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा आकांक्षी ज़िला कार्यक्रम की शुरुआत की गई। इस योजना का उद्देश्य देश भर के 112 सबसे कम विकसित ज़िलों को तेजी से और प्रभावी ढंग से बदलने का लक्ष्य है। इनमें से अधिकांश ज़िले आदिवासी–बहुल हैं। स्कूली शिक्षा भी इस कार्यक्रम के प्रमुख घटकों में से एक है। शौचालयों का निर्माण एवं उपयोग, कार्यात्मक पेयजल सुविधा, कार्यात्मक बिजली सुविधा जैसे बुनियादी ढांचे तथा आरटीई निर्दिष्ट छात्र–शिक्षक अनुपात जैसे आवश्यक पैरामीटर उपलब्ध कराकर इन ज़िलों में सभी बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करने का महत्वाकांक्षी कार्यक्रम चलाया जा रहा है।

आगामी लक्ष्य

जनजातीय क्षेत्रों की अनूठी ऐतिहासिक और सामाजिक पृष्ठभूमि होती है। आदिवासी समुदाय की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए उनकी भाषा में आधुनिक शिक्षा को सभी तक पहुंचाना होगा। केंद्र और राज्य सरकारों के विभिन्न विभागों और मंत्रालयों की योजनाओं में समन्वय से एवं स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान रख कर क्रियान्वयन करने से सबको शिक्षा–अच्छी शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निम्न बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए–

- छात्रों और उनके शिक्षकों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध कक्षाओं में सार्थक शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण कारकों में से एक है। यह समझना महत्वपूर्ण है कि आदिवासी बच्चों की पृष्ठभूमि उनके गैर–आदिवासी सहपाठियों या शिक्षकों के समान नहीं होती है। गैर–आदिवासी शिक्षकों को उचित प्रशिक्षण से कक्षा में छात्रों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जा सकती है।
- आदिवासी छात्रों की संस्कृति, परम्पराओं, तौर–तरीकों, भाषाओं और सांस्कृतिक विरासत का सम्मान करने और उन्हें महत्व देने की आवश्यकता है। आदिवासी युवाओं के बीच स्वदेशी ज्ञान को स्कूलों और कॉलेजों में प्रचारित करना शिक्षकों और अकादमिक कर्मियों की ज़िम्मेदारी होनी चाहिए।
- आदिवासी शिक्षा की पाठ्य सामग्री और शिक्षण पद्धति का निष्पक्ष मूल्यांकन किया जाना चाहिए। नई शिक्षा नीति के अनुसार अनुभवात्मक शिक्षण पद्धति को आदिवासी क्षेत्रों के स्कूलों में लागू किया जाना चाहिए।
- आदिवासी छात्रों को शिक्षा के साथ कला, खेल, शिल्प और विभिन्न कौशलों के लिए पर्याप्त अवसर दिए जाने से इनकी क्षमता और प्रतिभा को निखारने में मदद मिलेगी।
- प्राथमिक शिक्षा में लोककथाओं, परम्पराओं, कहानियों और पहेलियों को शिक्षण पद्धति के रूप में प्रयोग करना होगा जिससे कला, शिल्प, संगीत, गीत, दंतकथाओं आदि में आदिवासियों की समृद्ध परम्परा का संवर्धन करने में मदद मिलेगी।
- जनजातीय छात्रों में आदिवासी मूल्यों और अपने लोगों की सेवा के लिए संवेदीकृत करने की भी महती आवश्यकता है। उनमें शोषण का विरोध करने और अपने अधिकारों की रक्षा करने के लिए जागरूकता विकसित करनी होगी।
- गुणवत्ता शिक्षा के लिए सरकार, परिवार, समुदाय और सिविल सोसाइटी समूहों जैसे सभी हितधारकों को एक साथ मिलकर कार्य करने के लिए उपयुक्त वातावरण का निर्माण किया जाना चाहिए।
- नीति निर्माताओं को आदिवासी बच्चों की शैक्षिक स्थिति को बढ़ाने के लिए एक दीर्घकालिक रणनीति पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। आदिवासी संस्कृति, भाषा, संज्ञानात्मक शक्ति, पाठ्यक्रम और बच्चों की अंतर्निहित सीखने की क्षमता को पहचान कर आदिवासी शिक्षा प्रणाली में सुधार किया जा सकता है।

निष्कर्ष

दूरदराज के इलाकों में सामाजिक–आर्थिक रूप से एकीकृत स्वस्थ समाज को बढ़ावा देने के लिए आदिवासी समुदायों को शैक्षणिक रूप से विकसित करना होगा। सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने और राष्ट्र की प्रगति सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि आदिवासी क्षेत्र का प्रत्येक बच्चा आरंभिक शिक्षा से सम्पूर्ण शिक्षा गुणवत्तापूर्ण ढंग से प्राप्त करे। लगभग 4.5 करोड़ छात्रों को आधुनिक शिक्षा की मुख्यधारा से जोड़े बिना समावेशी राष्ट्र और विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। आदिवासी शिक्षा योजनाओं के कार्यान्वयन के लिए स्कूलों, अन्य सुविधाओं या छात्रवृत्ति की अनेक योजनाएँ हैं। इनके सफल कार्यान्वयन से आत्मनिर्भर भारत और विकसित भारत के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। देश ने आज़ादी के बाद से आदिवासी क्षेत्रों में गुणवत्ता शिक्षा सुनिश्चित करने के लिए एक लंबा रास्ता तय किया है। किन्तु इस दिशा में निरंतर सार्थक प्रयास की सतत आवश्यकता है।

(लेखक शिक्षा मंत्रालय के स्कूल शिक्षा और साक्षरता विभाग में निदेशक हैं। लेख में व्यक्त विचार निजी हैं।)

ईमेल: jppandey.irps@gov.in

Academy For Education & Training Pvt.

आदिवासी जीवन में वन और वनोपज का महत्व

–अरविंद कुमार सिंह

आदिवासी जीवन में खासतौर पर वनाधिकार कानून लागू होने के बाद काफी बदलाव नज़र आने लगा है। वनाधिकार कानून या एफआरए के नाम से चर्चित इस कानून का असली नाम है अनुसूचित जनजाति और अन्य पारम्परिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006। इसके लागू होने के बाद से आजीविका के लिए वन भूमि और संसाधनों के उपयोग और विस्थापन जैसे मामलों में उनको सुरक्षा मिली। भारत सरकार के जनजातीय कार्य मंत्रालय ने वनाधिकार कानून लागू होने के बाद इसके अब तक के प्रभावों पर राज्य जनजातीय अनुसंधान संस्थानों की मदद से जो अध्ययन कराए हैं, उसके उत्साहजनक नतीजे सामने आए हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि जनजातियों की आय में बढ़ोत्तरी के साथ उनके जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि हुई है।

भारत का आदिवासी या जनजातीय समाज सबसे कठिन और जटिल इलाकों में निवास करता है। 2011 की जनगणना के मुताबिक उनकी आबादी 10.45 करोड़ से अधिक थी। जनजातियों की 89.97 प्रतिशत आबादी ग्रामीण अंचलों और 10.03 प्रतिशत शहरों में निवास करती है। विविधताओं भरे देश के पूर्वोत्तर क्षेत्र में देश की जनजातीय आबादी का 12 प्रतिशत हिस्सा रहता है। पिछली जनगणनाओं से तुलना करें तो समग्र रूप में जनजातीय आबादी बढ़ रही है। 1971 में वह देश की आबादी का 6.9 प्रतिशत थी जो 1991 में 8.1 प्रतिशत और 2011 में बढ़ कर 8.6 प्रतिशत हो गई।

जनजातीय समुदाय देश के 15 प्रतिशत भूभाग में अलग पारिस्थितिकीय और भू–जलवायु के बीच मैदानी क्षेत्रों से लेकर सघन वन, पहाड़ी और दुर्गम इलाकों में निवास करता है। उनकी अलग–अलग संस्कृति, स्वशासन प्रणाली और जीवन पद्धति है। उनकी मौजूदगी 27 राज्यों में 307 ज़िलों में है। देश के 39 ज़िले जनजातीय–बहुल हैं। देश के सबसे निर्धन 20 ज़िले आदिवासी बहुल हैं। 2011 की जनगणना में पाया गया था कि 50 प्रतिशत से अधिक आदिवासी परिवारों के पास रेडियो, टीवी, साईकिल या मोटर साइकिल या फोन जैसी वस्तु भी नहीं थी। वे कच्चे घरों या घासफूस की झोपड़ियों में रहते थे। साफ पीने के पानी की सुविधा

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. Delhi

भी नहीं थी। हालांकि बीते दशकों के सतत प्रयासों से तस्वीर काफी हद तक बदल चुकी है, फिर भी अभी बहुत कुछ करने की ज़रूरत है।

आज़ादी के बाद संविधान बनने के दौरान आदिवासी समाज को अनुसूचित जनजाति नाम दिया गया। संविधान में आदिवासी, आदिम जनजातियों, वनवासियों या वन्य जातियों के स्थान पर इसी शब्द का उपयोग किया गया। अंग्रेज़ी में आदिवासी के लिए प्रचलित ट्राइब शब्द लैटिन भाषा के ट्राईब्स से बना है, जिसका अर्थ है गरीब या विपन्न। भारत में आदिवासी समाज भले ही भौतिक सुविधाओं में पीछे रहा हो लेकिन वह समृद्ध विरासत का अधिकारी और मूल निवासी रहा है। प्रकृति की गोद में रहते हुए उन्होंने इतिहास के लंबे कालखंडों में अपना मूलभूत कौशल, सादगी और संतोष की पूंजी को बनाए रखा। आर्थिक तौर पर वे कमज़ोर भले रहे हों लेकिन तमाम सोपानों पर वे सभ्य समाज से काफी आगे हैं। जनजातीय हस्तकला, संगीत और नृत्य की जो धरोहर उन्होंने संजों कर रखी है, वह बताती है कि वे बाकियों से कितना आगे हैं। बेहद दुर्गम और जटिल जंगली इलाकों में जनजातीय बालिकाएं और महिलाएं महानगरों से अधिक सुरक्षित हैं। उनके पास विराट औषधीय सम्पदा और परम्परागत ज्ञान भी है।

यह अलग बात है कि अन्य समुदायों की तुलना में आजीविका के लिए वे कड़ा संघर्ष करते हैं। जंगलों के बीच उनकी बड़ी आबादी रहती है। इस नाते उनके जीवन में जंगल ही सबसे अहम हैं। आदिवासियों में अधिकतर की आजीविका वन आधारित और खेतीबाड़ी पर निर्भर है। देश में 75 कमज़ोर या आदिम जनजातीय समूह कई चुनौतियों से जूझ रहे हैं। अंग्रेज़ी राज में इनकी स्थिति अलग थी लेकिन आज़ादी के बाद संविधान में इनको विशेष संरक्षण दिया गया।

संविधान के अनुच्छेद 366 (25) में अनुसूचित जनजाति का अर्थ ऐसी जनजातियों या समुदायों से है जिन्हें अनुच्छेद 342 के तहत मान्यता दी गई है। देश में अधिसूचित जनजातियों की संख्या 705 है। सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक पिछड़ेपन के मद्देनज़र इनको शिक्षा और रोज़गार में आरक्षण प्रदान किया गया है और राजनीतिक प्रतिनिधित्व भी दिया गया। विकास योजनाओं में इस बात का ध्यान रखा गया कि वे मुख्यधारा में लाने के क्रम में अपनी संस्कृति को बरकरार रख सकें। अनुसूचित जनजातियों को वनाधिकार अधिनियम 2006, सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम 1955, अनुसूचित जाति और जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम 1989 तथा पैसा अधिनियम 1996 से उनको संरक्षित किया गया है।

आदिवासी जीवन में वनों का महत्व

देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 24.62 प्रतिशत वन है और यही आदिवासी जीवन का आधार है। वन स्थिति रिपोर्ट 2021 के मुताबिक पिछली बार की तुलना में वनों में बढ़ोत्तरी हुई है। क्षेत्रफल के हिसाब से, मध्य प्रदेश में देश का सबसे बड़ा वन क्षेत्र है। इसके बाद अरुणाचल प्रदेश, छत्तीसगढ़, ओडिशा और महाराष्ट्र की बारी आती है। कुल भौगोलिक क्षेत्र के प्रतिशत के रूप में वन आवरण के मामले में शीर्ष पांच राज्यों में पूर्वोत्तर भारत के मिज़ोरम (84.53 प्रतिशत), अरुणाचल प्रदेश (79.33 प्रतिशत), मेघालय (76 प्रतिशत), मणिपुर (74.34 प्रतिशत) और नगालैंड (73.90 प्रतिशत) आते हैं। जहां वन हैं, वहां जनजातीय समुदाय के लोग रहते ही हैं।

वनों का मानव समाज के विकास में बहुत महत्व आदिकाल से रहा है। लेकिन औपनिवेशिक काल में बने कानूनों ने आदिवासियों को जल, जंगल और ज़मीन से बेदखल किया और प्राकृतिक संसाधनों से वंचित किया। 1927 के वन अधिनियम के बनने के बाद वे सबसे अधिक प्रताड़ित रहे क्योंकि यह धारणा बनायी गई कि वे ही जंगलों की बर्बादी के ज़िम्मेदार हैं। वस्तुतः यह एकदम गलत तथ्य था लेकिन इसकी आड़ में उनका सबसे अधिक उत्पीड़न हुआ। उद्योग, खनन, बड़े बांधों और तमाम परियोजनाओं के लिए उनकी बहुत बड़ी आबादी को विस्थापित होना पड़ा। इस कारण असंतोष और संघर्ष बढ़ा। नक्सलवादियों ने भोले–भाले आदिवासियों में जगह बनायी और लाल गलियारा खड़ा कर काफी अविश्वास पैदा किया, जिससे निपटने में भारी समय, श्रम और धन लगा।

वनाधिकार कानून और वनवासी समाज

लेकिन आदिवासी जीवन में खासतौर पर वनाधिकार कानून लागू होने के बाद काफी बदलाव नज़र आने लगा है। वनाधिकार कानून या एफआरए के नाम से चर्चित इस कानून का असली नाम है अनुसूचित जनजाति औ अन्य पारम्परिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006। इसके लागू होने के बाद से आजीविका के लिए वन भूमि और संसाधनों के उपयोग और विस्थापन जैसे मामलों में उनको सुरक्षा मिली।

भारत सरकार के जनजातीय कार्य मंत्रालय ने वनाधिकार कानून लागू होने के बाद इसके अब तक के प्रभावों पर राज्य

मज़बूत तंत्र की आवश्यकता

लघु वनोपजों की खरीद के मामले में राज्यों को अभी और मज़बूत तंत्र बनाने की ज़रूरत है। इंडियन इंस्टीट्यूट आफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन की एक रिपोर्ट में पाया गया है कि खरीद केंद्रों की स्थापना में देरी होती है और स्कीम के बारे में जागरूकता का अभाव है। आदिवासी औसतन 2.7 किमी. दूरी तय करके लघु वनोपज का संग्रह करते हैं। हाट बाज़ार तक इनको पहुँचाने में परिवहन सुविधाओं का अभाव है। लघु वनोपज के साथ 32.3 प्रतिशत आदिवासी हाट बाज़ार पैदल जाते हैं, जबकि 31.1 प्रतिशत साईकिल पर। हाल में नीति आयोग ने इस योजना का मूल्यांकन कर इसे और बेहतर बनाने तथा संवेदनशीलता के साथ आगे बढ़ाने के लिए हितधारकों के बीच जागरूकता के और प्रसार की ज़रूरत आंकी है। साथ ही, लघु वनोपजों के विविध उपयोगों के लिए उन पर अनुसंधान और विकास की भी ज़रूरत है।

Elite Academy For Education & Training Pvt. Delhi

जनजातीय अनुसंधान संस्थानों की मदद से जो अध्ययन कराए हैं, उसके उत्साहजनक नतीजे सामने आए हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि जनजातियों की आय में बढ़ोत्तरी के साथ उनके जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि हुई है। बड़ी संख्या में महिला अधिकार पत्र धारक हैं जिस कारण महिलाओं को और सशक्त बनने का मौका मिला। ग्राम सभाओं की आय में भी वृद्धि हुई है। लघु वनोपजों की बिक्री के साथ स्वयं के वन संसाधनों के प्रबंधन और संरक्षण में वे अधिक सक्षम हुए हैं। हालांकि अध्ययनों में वन प्रशासन और उसके सशक्तीकरण के लिए क्षमता निर्माण, जैव विविधता सुधार और अन्य बातों के साथ बुनियादी ढांचे में सुधार का सुझाव भी दिया गया है।

वनाधिकार कानून के तहत 31 मार्च, 2022 तक किए गए 44,29,065 दावों में से 42,60,247 दावे व्यक्तिगत और 1,68,818 सामुदायिक थे। इसके विपरीत कुल 22,34,292 अधिकार पत्र वितरित हो चुके हैं, जिसमें से 21,32,217 व्यक्तिगत और 1,02,075 सामुदायिक अधिकार पत्र शामिल हैं। 18 राज्यों में 45,47,165 एकड़ भूमि के व्यक्तिगत और 1,13,65,528 एकड़ सामुदायिक वन भूमि के अधिकार पत्र सौंपे जा चुके हैं। अधिकार पत्र से जुड़ी भूमि की कुल पैमाइश 1,59,12,693 एकड़ भूमि से अधिक बैठती है। केंद्र के पास असम और बिहार की रिपोर्ट अभी आनी है। जनजातीय कार्य मंत्रालय हर महीने वनाधिकार कानून के क्रियान्वयन की प्रगति रिपोर्ट प्रधानमंत्री कार्यालय, कैबिनेट सचिवालय और नीति आयोग को भेजता है।

वनाधिकार कानून से जनजातियों को और सक्षम बनाने में मदद मिली है। कानून में लघु वन उत्पादों के संग्रह, इस्तेमाल और बिक्री के लिए स्वामित्व, पहुँच के अधिकार को मान्यता मिलने से उनका उत्पीड़न रुका और स्थायी आजीविका का सम्मानजनक अवसर मिला। अधिनियम में परिभाषित लघु वन उत्पादों में इमारती लकड़ी को छोड़ कर वे सभी वन उत्पाद शामिल हैं जिनकी उत्पत्ति पौधे से हुई है। इसमें बांस, बुरूश की लकड़ी, अंगूर, बेंत, कोया, शहद, मोम, लाख, तेंदू या केंडु के पत्ते, औषधीय पौधे और जड़ी–बूटियां शामिल हैं। यही नहीं, कानून से आजीविका के लिए भूमि की स्वयं खेती करने के अधिकार को भी मान्यता मिली। लघु वनोपजों का इस्तेमाल और बिक्री का अधिकार उनको मिला और भूमि का मालिकाना हक भी, जिसके बाद वे विभिन्न सरकारी योजनाओं का लाभ पाने के हकदार बन सके।

आदिवासी–बहुल ज़िले यानी 'शैडयूल्ड' क्षेत्रों को, जिन्हें संविधान में विशेष तौर पर रेखांकित किया गया है, उनके लिए वर्ष 1996 में संसद ने विशेष तौर पर पंचायत राज का एक अलग कानून बनाया, जिसे संक्षेप में 'पेसा' कानून कहा जाता है। इस कानून में आदिवासी क्षेत्रों की विशेष ज़रूरतों का ध्यान रखते हुए और यहां ग्रामसभा को मज़बूत करने पर विशेष ध्यान दिया गया।

आदिवासी जीवन में लघु वनोपज और एमएसपी पर खरीद

जनजातीय समुदाय के आर्थिक विकास के लिए जनजातीय कार्य मंत्रालय द्वारा चल रही योजनाओं में प्रधानमंत्री जनजातीय विकास मिशन सबसे खास है। न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) के माध्यम से लघु वनोपज के विपणन के लिए तंत्र और उसके लिए मूल्य श्रृंखला का विकास तथा इसके लिए संस्थागत सहायता जैसी

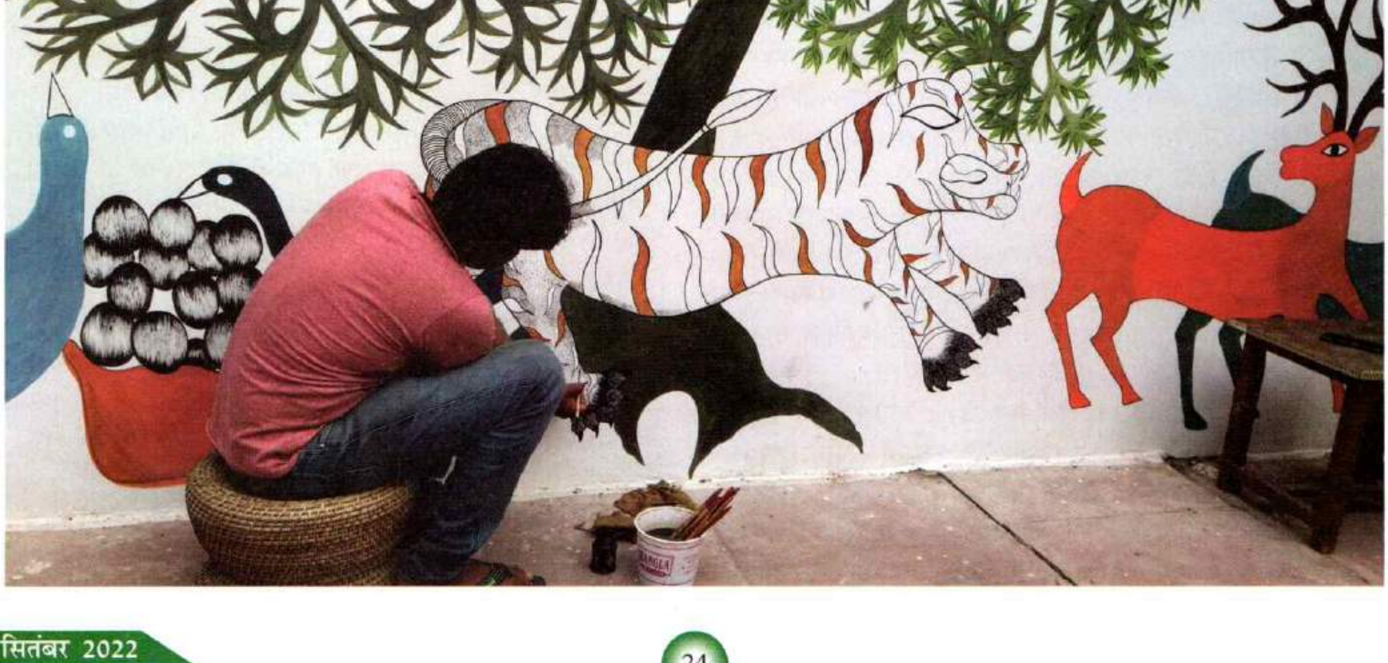

"वनधन, जनधन और गोबर धन भविष्य में आदिवासी अर्थव्यवस्था के कायाकल्प का बड़ा कारक बनेगा।"

14 अप्रैल, 2018, प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी, (बीजापुर, छत्तीसगढ़)

दो योजनाओं का मिशन के तहत अब विलय कर दिया गया है।

समर्थन मूल्य के माध्यम से लघु वनोपज या एमएसपी की खरीद योजना 87 लघु वनोपजों पर लागू है। राज्य एजेंसियों की मदद से एमएसपी पर खरीद होती है। वर्ष 2014–15 से 2022–23 के दौरान भारत सरकार ने एमएसपी पर लघु वनोपजों की खरीद के लिए 18 राज्य सरकारों को 319.65 करोड़ रुपये की राशि जारी की। इस अवधि में 17 राज्यों की एजेंसियों ने 524 करोड़ रुपये की लघु वनोपजों को खरीदा। सबसे अधिक 412.77 करोड़ रुपये की 40 लघु वनोपजों की खरीद छत्तीसगढ़ ने की है। अधिक खरीद वाले अन्य राज्यों में ओडिशा, गुजरात, आंध्र प्रदेश और महाराष्ट्र शामिल हैं।

यह योजना 2013–14 में आरंभ हुई थी तब इसकी परिधि में 10 लघु वनोपज थे। लेकिन पिछले आठ सालों में योजना की परिधि में 87 लघु वनोपजों तक कर लाया गया है। पहले इमली बीज, जंगली शहद, गोंद, करंज के बीज, साल बीज, महुआ बीज, साल के पत्ते, बीज सहित चिरौंजी की फली, हरीकिका, रंगिनी लाख और कुसुमी लाख एमएसपी के दायरे में थे। लेकिन बाद में नीम के बीज, बहेड़ा, सूखी शिकाकाई की फली, नागरमोथा, शतावरी की जड़, गुग्गल, महुआ के सूखे फूल, तेजपत्ता, जामुन के सूखे बीज, सूखा रीठा, अर्जुन छाल, गिलोय, मकोय, वन जीरा समेत, इमली का बीज, हर्र, बहेड़ा, बीज लाख, सुपारी, काला चावल, सरसों, कच्चा काजू, सूखा अदरक, अखरोट, हाथी सेब सूखा, गोखरू, जंगली मशरूम आदि इसमें शामिल हैं। सबसे अधिक एमएसपी गुग्गल (एक्ज़्यूटेड) पर 812 रुपये किग्रा है, जबकि काजू 800 रुपये, बीज लाख 677 रुपये और कच्चा काजू 400 रुपये किग्रा है।

लघु वनोपजों पर वन क्षेत्रों में रहने वाले वनवासियों की आजीविका टिकी है। वन निवासी भोजन, आश्रय, दवाओं और नकद आय के लिए इन पर निर्भर हैं। इनकी करीब आधी आबादी या 1.1 करोड़ परिवार जंगलों में ही रहते हैं। 2018 में ट्राइफेड के आकलन में पाया गया था कि 55 प्रमुख लघु वनोपजों का 3,50,000 टन संग्रह होता है जिसका मूल्य 20,000 करोड़ रुपये से अधिक बनता है। पहले 2011 में हक समिति ने 14 लघु वनोपजों की सालाना कीमत 1900 करोड़ रुपये परिकल्पित की थी। वनों से आदिवासी फूल, फल, बीज, छाल और पत्तियों जैसे विभिन्न वृक्ष–जनित उत्पाद और शहद संग्रहित करते हैं जो पूरी तरह से जैविक उत्पाद हैं। इनकी कीमत पूरी दुनिया में अधिक होती है।

सच्चाई यह है कि आदिवासी अंचलों में सक्रिय बिचौलिये भारी शोषण करते हैं और औने–पौने दामों पर उत्पादों की खरीद करते रहे हैं। एमएसपी की व्यवस्था करने के बाद स्थिति बदल रही है। सरकारी खरीद अभी सीमित हैं लेकिन जो खरीद अन्य स्रोतों से हो रही है, उसमें आदिवासियों को पहले से बेहतर मूल्य मिल रहा है। लेकिन राज्यों की दिलचस्पी बढ़ेगी तो तस्वीर और बदलेगी। जनजातीय कार्य मंत्रालय का कहना है, कि चूंकि एमएसपी मांग आधारित कार्यक्रम है लिहाजा धनराशि का आवंटन राज्यों के प्रस्तावों पर आधारित होता है। इस योजना के तहत सरकार ने अब सीधे ट्राइफेड को ही राज्यों को धन जारी करने के लिए अधिकृत किया है, जो इस मामले में सीधे राज्य सरकारों के संवाद में रहती है।

लघु वनोपजों का संग्रह बहुत सरल काम नहीं है। आदिवासी अपने परिवार जनों के साथ जंगलों में लंबी दूरी तय कर लघु वनोपजों का संग्रह करते हैं, उनको सुखाते हैं और फिर दूर–दराज के हाट–बाज़ारों में बेच कर अपनी रोज़मर्रा की ज़रूरतें पूरी करते हैं। आदिवासी हाट बाज़ारों में वस्तु विनिमय अभी भी चलता है। वहां बिचौलियों और भ्रष्ट व्यापारियों के द्वारा भोले–भाले आदिवासियों का भारी शोषण होता है।

देश के विभिन्न हिस्सों में करीब पांच हजार से अधिक

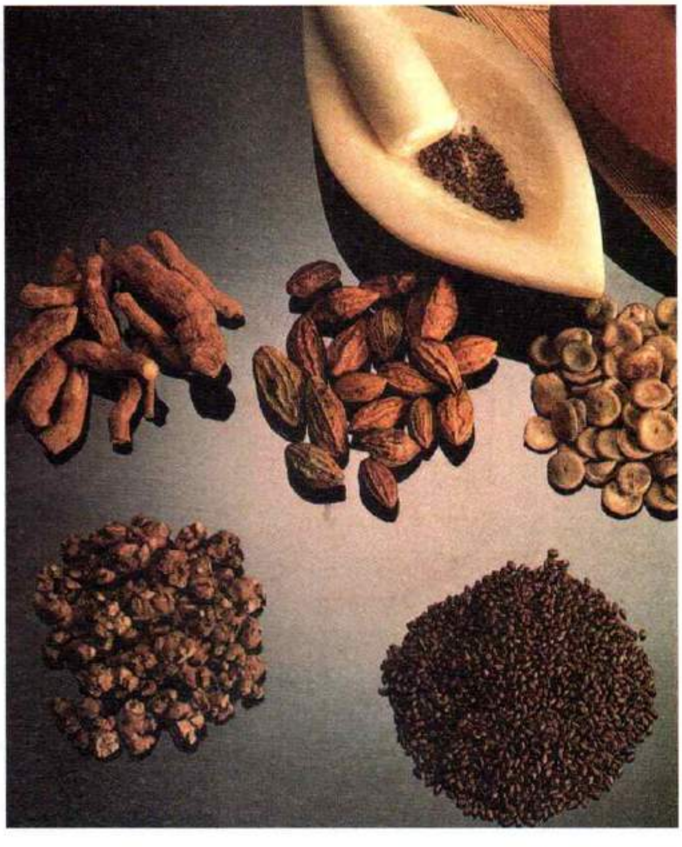

आदिवासी हाट बाज़ार हैं, जहां सालाना करीब दो लाख करोड़ रुपये का कारोबार होता है। हालांकि इसमें से सीमित धन ही आदिवासियों के हाथ आता है। फिर भी इस नई एमएसपी योजना से तात्कालिक फायदा यह हुआ है बिचौलियों को बढ़े दाम पर कई उत्पाद खरीदने पड़ रहे हैं जिसका फायदा आदिवासियों को हो रहा है। पहले वे कौड़ियों के दाम में सामान खरीदते थे और उपभोक्ताओं को कई गुना अधिक दामों पर बेचते थे।

Elite Academy Education & Training Pvt. Ltd.

अनाज के मामले में बड़ी कृषि मंडियों का बड़ा तंत्र है। लेकिन सबसे जटिल और कठिन इलाकों में बिखरे आदिवासी हाट बाज़ारों में अधिकतर साप्ताहिक लगते हैं, जहां न गोदाम हैं न प्रोसेसिंग सुविधाएं। फिर भी कोविड–19 महामारी के दौरान आदिवासी अर्थव्यवस्था को एमएसपी योजना से काफी मदद मिली क्योंकि इस दौरान वनोपजों के एमएसपी में 16 से 66 प्रतिशत के बीच बढ़ोत्तरी हुई।

आदिवासी किसानों की समस्या

आदिवासियों की बड़ी आबादी कृषक और कृषि मज़दूर है। मनरेगा से उनकी जीवन की दिक्कतें कम हुईं लेकिन खेती की दशा कमज़ोर है। सीमित सिंचाई के साथ पिछड़े साधन होने से औसत उत्पादता बहुत कम है। उनके तिलहन, दलहन और जैविक मसालों को उचित दाम नहीं मिल पाता। आदिवासियों में 75.42 प्रतिशत परिवारों के पास नाममात्र की जोतें हैं, इस कारण भी खेती के साथ लघु वनोपज एकत्र करना आजीविका के लिए ज़रूरी होता है।

संसद की महिलाओं को शक्तियां प्रदान करने संबंधी समिति (2015–16) ने 'जनजातीय महिलाओं के सशक्तीकरण' विषय पर पड़ताल में अन्य बातों के साथ यह बात खासतौर पर रेखांकित की है कि हाल के सालों में जनजातीय महिलाओं ने खुद को कृषि कार्यों के अलावा पशुपालन, बकरी पालन, मुर्गी पालन, बागवानी और पुष्प कृषि से जोड़ा है, लेकिन कृषि की अनिश्चित प्रवृत्ति और बाज़ार के उतार–चढ़ाव के कारण खेती से उनका मोह भंग हो रहा है। फिर भी छत्तीसगढ़, पूर्वोत्तर और कई इलाकों में बदलाव की प्रेरक कहानियां उभर रही हैं। मनरेगा से 100 की जगह 150 दिनों का रोज़गार मिलने से आदिवासी समाज और खासतौर पर महिलाएं अधिक सशक्त हुई हैं।

वन धन योजना

वन धन योजना प्रधानमंत्री जनजातीय विकास मिशन के तहत ट्राइफेड के माध्यम से कार्यान्वित हो रहे प्रमुख कार्यक्रमों में है। वन धन स्वयंसहायता समूहों के माध्यम से एक व्यापक पहल है जिसके तहत प्रशिक्षण, कच्चे माल के वैज्ञानिक तरीके से एकत्रीकरण, प्राथमिक स्तर पर प्रोसेसिंग, ब्रांडिंग, पैकेजिंग और विपणन जैसे तत्व समाहित हैं।

2019 में वनधन कार्यक्रम में संशोधन किया गया। इसके तहत ग्राम स्तर के प्राथमिक स्वयंसहायता समूहों का नामकरण वनधन स्वयंसहायता समूह किया गया। इसका गठन 20 ऐसे आदिवासी मिलकर कर सकते है, जो लघु वनोपजों के संग्रह, प्रोसेसिंग और मूल्य संवर्धन में लगे हैं। 15 ऐसे केंद्रों से एक वन धन विकास केंद्र गठित होगा, जिसमें 300 सदस्य होंगे।

इस योजना की शुरुआत से अब तक ट्राइफेड ने 52,976 वन धन स्वयंसहायता समूहों और 3110 वन धन विकास केंद्रों को मंज़ूरी दी है। राज्यों को 46,143.15 लाख रूपये की राशि जारी की गई है। इस योजना के सीधे लाभार्थी 9,27,927 लाख आदिवासी हैं। दोनों योजनाओं में केंद्र सरकार प्रशिक्षण, जागरूकता प्रसार, कच्चा माल और टूल किट आदि के लिए धन उपलब्ध कराती है, जबकि राज्य सरकारें केंद्रों की स्थापना के लिए निःशुल्क भूमि और भवन उपलब्ध कराती हैं। वन धन कार्यक्रम को और सार्थक बनाने के लिए इसके प्रशिक्षण में कुछ बदलाव किया गया है ताकि

वन धन भविष्य में गेम चेंजर योजना के तौर पर साबित हो सकती है क्योंकि इससे लघु वनोपजों की बेहतर कीमत की ठोस राह निकलेगी। यह जनजातीय कलाकारों के लिए रोज़गार सृजन के लिए नई राह खोल रही है। मूल्यवर्धित उत्पादों की बिक्री से प्राप्त आय सीधे आदिवासियों के पास पहुंचेगी तो उनका जीवन सरल होगा। मणिपुर एवं नगालैंड जैसे राज्यों में स्टार्टअप मज़बूती पकड़ रहे हैं। 200 उत्पादक संगठनों के गठन पर भी काम चल रहा है और लघु वनोपजों के लिए 600 गोदामों और तीन हज़ार हाट बाज़ार पर भी काम आगे बढ़ेगा।

आदिवासियों को सतत आजीविका और आय का स्थायी स्रोत मिल सके। मूल्यवर्धन से जनजातीय उत्पादों को बेहतर मूल्य मिलता है।

इस कार्यक्रम की विशेषता यह भी है कि यह बाज़ार से संबंध स्थापित करने में सफल रहा है। कई उत्पादों की एक विस्तृत श्रृंखला है जिसको आज ट्राइब्स इंडिया आउटलेट्स के माध्यम से बेचा जा रहा है। खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय के साथ मिलकर ट्राइफेड छत्तीसगढ़ में जगदलपुर और महाराष्ट्र में रायगढ़ में दो ट्राईफूड परियोजनाओं को लागू कर रहा है। वहां जामुन कस्टर्ड, महुआ ड्रिंक, आंवला जूस की प्रोसेसिंग होगी और जल्दी इनका उत्पादन आरंभ हो जाएगा। मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, गोवा, उत्तर प्रदेश, झारखंड और अन्य राज्यों की साझेदारी में लघु वनोपज आधारित औद्योगिक पार्कों की स्थापना की दिशा में भी कदम उठे हैं।

ट्राईफेड की बढ़ती भूमिका

भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास संघ (ट्राइफेड) बीते दशकों में आदिवासियों के जीवन की एक महत्वपूर्ण संस्था बन कर उभरी है। इसकी स्थापना 1987 में हुई थी। यह जनजातीय उत्पादों के विपणन समेत कई मामलों में बड़ा मंच बन कर उभरा है। अमेज़न, फ्लिपकार्ड, स्नैपडील, बिग बास्केट और जीईएम जैसी ई–कामर्स कंपनियों से समझौता कर जनजातीय उत्पादों को दुनिया भर मे लोकप्रिय बनाने में यह प्रयासरत है। विख्यात खिलाड़ी एमसी मैरीकॉम को ट्राइब्स इंडिया ने अपना ब्रांड एम्बेसेडर बनाया है। सरकारी संस्थागत खरीद को बढ़ावा देने के लिए वह अपने ट्राइब्स इंडिया आउटलेट के माध्यम से जनजातीय वस्त्र, ज्वैलरी, पेंटिंग, धातु शिल्प, पोटरी उत्पाद, बेंत और बांस उत्पाद, प्राकृतिक और जैविक खाद्य उत्पादों को लोकप्रिय बनाने में लगा है।

ट्राइफेड के पास 119 आउटलेट्स का नेटवर्क है, जहां जनजातीय उत्पादों की बिक्री होती है। वर्ष 2020–21 में ट्राइफेड ने जनजातियों से ट्राइब्स इंडिया आउटलेट के लिए 1330.11 लाख रुपये की सामग्री की खरीद की और 3012.75 लाख रुपये की बिक्री की जिससे करीब पांच लाख वन निवासियों को लाभ हुआ। 2019 में ट्राइब्स इंडिया ने गो ट्राइबल अभियान भी आरंभ किया है।

जनजातीय कार्य मंत्रालय के अंतर्गत वन धन विकास केंद्रों की स्थापना, लघु वनोत्पादों की खरीद में भी यह अहम भूमिका निभा रहा है। साथ ही जनजातीय कारीगरों, स्वयं सहायता समूहों, वन धन लाभार्थियों और एनजीओ के साथ मिलकर काम कर रहा है ताकि हथकरघा, हस्तशिल्प और प्राकृतिक उत्पादों को विपणन की सहायता प्रदान की जा सके। जीआई टैग वाले स्वदेशी उत्पादों के साथ इसका दायरा बढ़ रहा है। पिछले एक दशक मे ट्राइफेड ने जनजातीय दस्तकारों के कौशल और उनके उत्पादों को अंतरराष्ट्रीय स्तर का बनाने के लिए कई डिज़ाइनरों की मदद ली। यह ट्राइफूड उत्पादों, आदि महोत्सव, जनजातीय मेलों आदि के माध्यम से जनजातियों के लिए मददगार बन रहा है।

जनजातीय कार्य मंत्रालय और आदर्श गाँव

जनजातीय कार्य मंत्रालय का गठन अक्तूबर 1999 में हुआ था। यह अनुसूचित जनजाति के विकास के लिए चलाई जा रही समग्र नीति, योजना और समन्वयन के लिए नोडल मंत्रालय है। हाल के सालों में जनजातीय कल्याण योजनाओं पर बजट भी काफी बढ़ा है। 2022–23 में लघु वनोपजों के लिए एमएसपी और संस्थागत समर्थन जैसी योजनाओं के प्रधानमंत्री जनजातीय विकास मिशन में समाहित होने के कारण केंद्रीय क्षेत्र की योजनाओं के लिए एक नए हेड संस्थागत समर्थन के लिए 499 करोड़ रुपये की राशि प्रस्तावित की गई है।

जनजातीय विकास योजनाओं में प्रधानमंत्री आदर्श ग्राम योजना काफी अहम है जिसके पांच सालों में यानी 2020–2026 के बीच साकार होने की उम्मीद है। इसकी मदद से 4.22 करोड़ जनजातीय समुदाय या कुल जनजातीय आबादी के 40 फीसदी हिस्से के लाभान्वित होने की संभावना है। पहले देश में उन 350 प्रखंडों के विकास के लिए जो मानव विकास संकेतकों में पीछे रहे हैं, 2014 में वनबंधु कल्याण योजना की शुरुआत की गई थी, बाद में इसे और विस्तृत बना कर जनजातीय कार्य मंत्रालय ने देश में 50 प्रतिशत से अधिक जनजातीय आबादी वाले 36,428 गावों की पहचान की है। प्रति गाँव करीब 20.38 लाख रुपये की राशि विकास योजनाओं पर व्यय होगी। चरणबद्ध तरीके से सुविधाओं के विकास के लिए चुने गए गाँवों में सबसे अधिक 7,307 गाँव मध्य प्रदेश, 4302 राजस्थान, 4029 छत्तीसगढ़, 3891 झारखंड, और 3605 गाँव महाराष्ट्र में हैं। इसके अलावा, यही नहीं विभिन्न बाघ अभयारण्यों के भीतर मौजूद 334 गाँवों समेत 24 राज्यों में कुल 2847 वन गांव हैं, जहां पर सुविधाओं का विकास पर्यावरण मंजूरी के बाद तय होगा। पांच सालों में इनको आदर्श गांव बनाने की योजना है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं। राज्यसभा टीवी में संसदीय और कृषि मामलों के पूर्व संपादक रह चुके हैं। कई पुस्तकों के लेखक एवं कई पुरस्कारों से सम्मानित। इनकी रचना एनसीईआरटी के हिंदी पाठ्यक्रम में भी शामिल है। लेख में व्यक्त विचार निजी हैं।)

ई–मेल: arvindksingh.rstv@gmail.com

Elite Academy of Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

आज़ादी के **75 वर्ष** पूरे होने पर सभी दे

स्वतंत्रता दिवस की हार्दि

आने वाले 25 वर्षों का अमृतकाल, ह

मिलकर बनाएं स्वतंत्रता सेनानियों

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

"स्वतंत्रता दिवस के मौके पर कृतज्ञ देशवासी अपने अनगिनत स्वतंत्रता सेनानियों को नमन करते हैं। जैसे देश की आज़ादी के मतवाले, स्वतंत्रता के लिए एकजुट हो गए थे, वैसे ही हमें देश के विकास के लिए एकजुट होना है।"

- नरेन्द्र मोदी

cbc 22201/13/0101/2223

#HarGharTiranga

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

आज़ादी का अमृत महोत्सव

...वासियों को
...क शुभकामनाएं

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. * Delhi *

...देशवासी का कर्तव्यकाल
...सपनों का भारत

लालकिले की प्राचीर से प्रधानमंत्री के भाषण के मुख्य अंश

- विश्व भारत की तरफ गर्व से देख रहा है। अपेक्षा से देख रहा है। समस्याओं का समाधान भारत की धरती पर दुनिया खोजने लगी है। विश्व का यह बदलाव, विश्व की सोच में यह परिवर्तन 75 साल की हमारी अनुभव यात्रा का परिणाम है।
- हम सबका साथ, सबका विकास का मंत्र लेकर चले थे, लेकिन देखते ही देखते देशवासियों ने सबका विश्वास और सबके प्रयास से उसमें और रंग भर दिए हैं।
- आने वाले 25 साल के लिए हमें पंच प्रण पर अपनी शक्ति केंद्रित करनी होगी। तो पहला प्रण है कि अब देश बड़े संकल्प लेकर ही चलेगा। दूसरा प्रण है हमें अपने मन के भीतर, आदतों के भीतर गुलामी का कोई अंश बचने नहीं देना है। तीसरा प्रण, हमें अपनी विरासत पर गर्व होना चाहिए। चौथा प्रण है एकता और एकजुटता। और पांचवां प्रण है नागरिकों का कर्तव्य, जिसमें प्रधानमंत्री भी बाहर नहीं होता, मुख्यमंत्री भी बाहर नहीं होता।
- महासंकल्प, मेरा देश विकसित देश होगा, डेवेलपड कंट्री होगा, विकास के हरेक पैरामीटर में हम मानवकेंद्रित व्यवस्था को विकसित करेंगे, हमारे केंद्र में मानव होगा, हमारे केंद्र के मानव की आशा–आकांक्षाएं होंगी। हम जानते हैं, भारत जब बड़े संकल्प करता है तो करके भी दिखाता है।
- आज दुनिया होलिस्टिक हेल्थ केयर की चर्चा कर रही है लेकिन जब होलिस्टिक हेल्थ केयर की चर्चा करती है तो उसकी नज़र भारत के योग पर जाती है, भारत के आयुर्वेद पर जाती है, भारत के होलिस्टिक लाइफस्टाइल पर जाती है। ये हमारी विरासत है जो हम दुनिया को दे रहे हैं।
- आज विश्व पर्यावरण की समस्या से जूझ रहा है। ग्लोबल वार्मिंग की समस्याओं के समाधान का रास्ता हमारे पास है। इसके लिए हमारे पास वो विरासत है, जो हमारे पूर्वजों ने हमें दी है।
- जन कल्याण से जग कल्याण की राह पर चलने वाले हम लोग जब दुनिया की कामना करते हैं, तब कहते हैं– सर्वे भवन्तु सुखिनः। सर्वे सन्तु निरामयाः।
- एक और महत्वपूर्ण विषय है एकता, एकजुटता। इतने बड़े देश को, उसकी विविधता को हमें सेलिब्रेट करना है, इतने पंथ और परम्पराएं–यह हमारी आन–बान–शान हैं। कोई नीचा नहीं, कोई ऊंचा नहीं है, सब बराबर हैं। कोई मेरा नहीं, कोई पराया नहीं, सब अपने हैं।
- अगर बेटा–बेटी एक समान नहीं होंगे तो एकता के मंत्र नहीं गुथ सकते हैं। जेंडर इक्वैलिटी हमारी एकता में पहली शर्त है।
- क्या हम स्वभाव से, संस्कार से, रोज़मर्रा की ज़िंदगी में नारी को अपमानित करने वाली हर बात से मुक्ति का संकल्प ले सकते हैं। नारी का गौरव राष्ट्र के सपने पूरे करने में बहुत बड़ी पूंजी बनने वाला है। यह सामर्थ्य मैं देख रहा हूँ और इसलिए मैं इस बात का आग्रही हूँ।
- हमें कर्तव्य पर बल देना ही होगा। चाहे पुलिस हो, या पीपुल हो, शासक हो या प्रशासक हो, नागरिक कर्तव्य से कोई अछूता नहीं हो सकता। हर कोई अगर नागरिक के कर्तव्यों को निभाएगा तो मुझे विश्वास है कि हम इच्छित लक्ष्य को प्राप्त करने में समय से पहले सिद्धि प्राप्त कर सकते हैं।
- आत्मनिर्भर भारत, यह हर नागरिक का, हर सरकार का, समाज की हर इकाई का दायित्व बन जाता है। आत्मनिर्भर भारत यह सरकारी एजेंडा, सरकारी कार्यक्रम नहीं है। यह समाज का जन आंदोलन है, जिसे हमें आगे बढ़ाना है।
- आप देखिए पीएलआई स्कीम, एक लाख करोड़ रुपया, दुनिया के लोग हिन्दुस्तान में अपना नसीब आज़माने आ रहे हैं।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी 15 अगस्त, 2022 को दिल्ली में 76वें स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर लाल किले की प्राचीर से राष्ट्र को संबोधित करते हुए।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी 15 अगस्त, 2022 को दिल्ली में 76वें स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर लाल किले में गार्ड ऑफ ऑनर का निरीक्षण करते हुए।

टेक्नोलॉजी लेकर के आ रहे हैं। रोज़गार के नए अवसर बना रहे हैं। भारत 'मैन्युफैक्चिरिंग हब' बनता जा रहा है।

- आज़ादी के 75 साल के बाद जिस आवाज़ को सुनने के लिए हमारे कान तरस रहे थे, 75 साल के बाद वो आवाज सुनाई दी है। 75 साल के बाद लालकिले पर से तिरंगे को सलामी देने का काम पहली बार मेड इन इंडिया तोप ने किया है। कौन हिन्दुस्तानी होगा, जिसको यह आवाज नई प्रेरणा, ताकत नहीं देगी।
- हमें 'आत्मनिर्भर' बनना है, एनर्जी सेक्टर में। सोलर क्षेत्र हो, विंड एनर्जी का क्षेत्र हो, रिन्यूएबल के और भी जो रास्ते हों, मिशन हाइड्रोजन हो, बायो फ्यूल की कोशिश हो, इलैक्ट्रिक व्हीकल पर जाने की बात हो, हमें 'आत्मनिर्भर' बनकर के इन व्यवस्थाओं को आगे बढ़ाना होगा।
- मैं प्राइवेट सेक्टर का भी आह्वान करता हूं आइए... हमें विश्व में छा जाना है। 'आत्मनिर्भर' भारत का ये भी सपना है कि दुनिया की जो भी आवश्यकताएं हैं, उसको पूरा करने में भारत पीछे नहीं रहेगा। हमारे लघु उद्योग हो, सूक्ष्म उद्योग हो, कुटीर उद्योग हो, 'ज़ीरो डिफेक्ट ज़ीरो इफेक्ट' हमें करके दुनिया में जाना होगा। हमें स्वदेशी पर गर्व करना होगा।
- हमारा प्रयास है कि देश के युवाओं को असीम अंतरिक्ष से लेकर समंदर की गहराई तक रिसर्च के लिए भरपूर मदद मिले। इसलिए हम स्पेस मिशन का, डीप ओशियन मिशन का विस्तार कर रहे हैं। स्पेस और समंदर की गहराई में ही हमारे भविष्य के लिए ज़रूरी समाधान हैं।
- इनोवेशन की ताकत देखिए, आज हमारा यूपीआई–भीम, हमारा डिजिटल पेमेंट, फिनटेक की दुनिया में हमारा स्थान, आज विश्व में रियल टाइम 40 पर्सेंट अगर डिजिटली फाइनेंशियल का ट्रांज़ेक्शन होता है तो मेरे देश में हो रहा है, हिन्दुस्तान ने ये करके दिखाया है।
- आज मुझे खुशी है हिन्दुस्तान के चार लाख कॉमन सर्विस सेंटर्स गाँवों में विकसित हो रहे हैं। गाँव के नौजवान बेटे–बेटियां कॉमन सर्विस सेंटर चला रहे हैं।
- शिक्षा में आमूलचूल क्रांति–ये डिजिटल माध्यम से आने वाली है। स्वास्थ्य सेवाओं में आमूलचूल क्रांति डिजिटल से आने वाली है। किसी जीवन में भी बहुत बड़ा बदलाव डिजिटल से आने वाला है।
- हमारा अटल इनोवेशन मिशन, हमारे इन्क्यूबेशन सेंटर, हमारे स्टार्टअप एक नया, पूरे क्षेत्र का विकास कर रहे हैं, युवा पीढ़ी के लिए नए अवसर ले करके आ रहे हैं।
- हमारे छोटे किसान–उनका सामर्थ्य, हमारे छोटे उद्यमी–उनका सामर्थ्य, हमारे लघु उद्योग, कुटीर उद्योग, सूक्ष्म उद्योग, रेहड़ी–पटरी वाले लोग, घरों में काम करने वाले लोग, ऑटो रिक्शा चलाने वाले लोग, बस सेवाएं देने वाले लोग, ये समाज का जो सबसे बड़ा तबका है, इसका सामर्थ्यवान होना भारत के सामर्थ्य की गारंटी है।
- नारी शक्ति : हम जीवन के हर क्षेत्र में देखें, खेल–कूद का मैदान देखें या युद्ध की भूमि देखें, भारत की नारी शक्ति एक नए सामर्थ्य, नए विश्वास के साथ आगे आ रही है। उनका भारत की 75 साल की यात्रा में जो योगदान रहा है, उसमें मैं अब कई गुना योगदान आने वाले 25 साल में नारीशक्ति का देख रहा हूँ।
- देश के सामने दो बड़ी चुनौतियाँ : पहली चुनौती– भ्रष्टाचार दूसरी चुनौती–भाई–भतीजावाद, परिवारवाद। भ्रष्टाचार देश को दीमक की तरह खोखला कर रहा है, उससे देश को लड़ना ही होगा। हमारी कोशिश है कि जिन्होंने देश को लूटा है, उनको लौटाना भी पड़े, हम इसकी कोशिश कर रहे हैं। मेरे देश के नौजवानों मैं आपके उज्ज्वल भविष्य के लिए, आपके सपनों के लिए, मैं भाई–भतीजावाद के खिलाफ लड़ाई में आपका साथ चाहता हूं।...

"आदिवासी मुझमें अपना प्रतिबिम्ब देख रहे हैं"

-राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मु

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

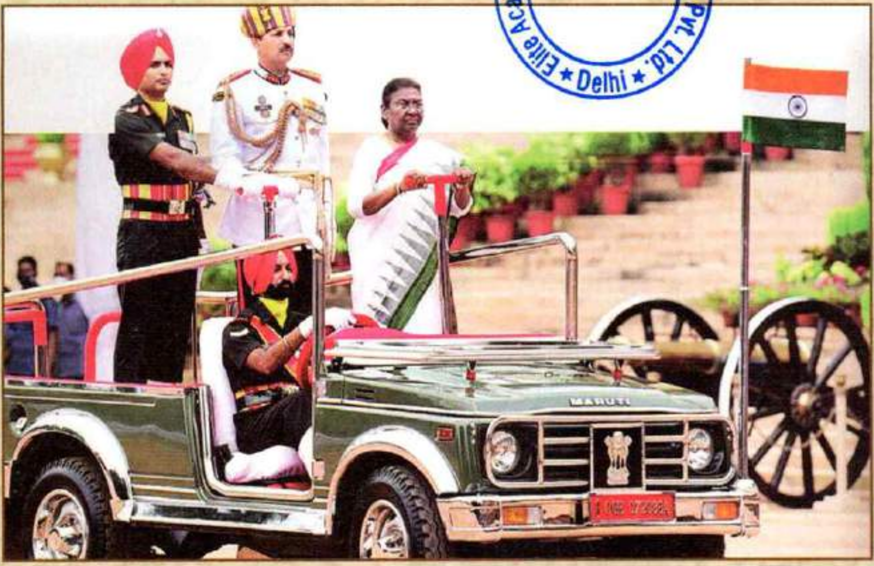

नवनिर्वाचित राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मु भारत की 15वीं राष्ट्रपति हैं। वे देश की पहली आदिवासी राष्ट्रपति हैं। 25 जुलाई, 2022 को उन्होंने देश के राष्ट्रपति के रूप में शपथ ग्रहण की। उनके जीवन के शुरुआती वर्षों, उनके संघर्षों और कई परीक्षणों ने उन्हें देश के सर्वोच्च पद तक पहुँचाया है। देश की आज़ादी के बाद जन्मीं पहली और सबसे कम उम्र की राष्ट्रपति श्रीमती द्रौपदी मुर्मु का जन्म ओडिशा के मयूरभंज ज़िले के नगर रायरंगपुर के उपरबेड़ा गाँव में 20 जून, 1958 को हुआ। इस छोटे से आदिवासी गाँव में तब प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करना भी एक सपने जैसा ही था। लेकिन अनेक बाधाओं के बावजूद अपने दृढ़ संकल्प के बल पर उन्होंने न केवल स्कूल की पढ़ाई की बल्कि कॉलेज जाने वाली गाँव की पहली बेटी भी बनी। श्रीमती द्रौपदी रायरंगपुर में श्री अरबिंदो इंटीग्रल स्कूल में शिक्षक के रूप में भी कार्य कर चुकी हैं। शिक्षा के बारे में श्री अरबिंदो के विचारों से वे निरंतर प्रेरित रही हैं। वे जिस पृष्ठभूमि से उठ कर इस गरिमामयी पद तक पहुँची हैं, वह वास्तव में हर गरीब को सपने देखने के लिए प्रेरित करता है। राष्ट्रपति चुने जाने के बाद अपने पहले संबोधन में वे कहती हैं–

'मैं जनजातीय समाज से हूँ और वार्ड कॉउंसलर से लेकर भारत की राष्ट्रपति बनने तक का अवसर मुझे मिला है। यह लोकतंत्र की जननी भारत वर्ष की महानता है। ये हमारे लोकतंत्र की ही शक्ति है कि उसमें एक गरीब घर में पैदा हुई बेटी, दूर–सुदूर आदिवासी क्षेत्र में पैदा हुई बेटी, भारत के सर्वोच्च संवैधानिक पद तक पहुँच सकती है। राष्ट्रपति के पद तक पहुँचना, मेरी व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं है, ये भारत के प्रत्येक गरीब की उपलब्धि है। मेरा निर्वाचन इस बात का सबूत है कि भारत में गरीब सपने देख भी सकता है और उन्हें पूरा भी कर सकता है। और ये मेरे लिए बहुत संतोष की बात है कि जो सदियों से वंचित रहे, जो विकास के लाभ से दूर रहे; वे गरीब, दलित, पिछड़े तथा आदिवासी मुझमें अपना प्रतिबिम्ब देख रहे हैं। मेरे इस निर्वाचन में देश के गरीब का आशीर्वाद शामिल है, देश की करोड़ों महिलाओं और बेटियों के सपनों और सामर्थ्य की झलक है। मेरे इस निर्वाचन में, पुरानी लीक से हटकर नए रास्तों पर चलने वाले भारत के आज के युवाओं का साहस भी शामिल है। ऐसे प्रगतिशील भारत का नेतृत्व करते हुए आज मैं खुद को गौरवान्वित महसूस कर रही हूँ।'

श्रीमती द्रौपदी ने राष्ट्र के नाम अपने पहले सम्बोधन में पर्यावरण के प्रति जनजातीय समाज के अटूट प्रेम का ज़िक्र भी किया और साथ ही, भारत की पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रतिबद्धता पर भी खुशी ज़ाहिर करते हुए कहा –

'आज जब विश्व सस्टेनेबल प्लानेट की बात कर रहा है तो उसमें भारत की प्राचीन परम्पराओं, हमारे अतीत की सस्टेनेबल लाइफ स्टाइल की भूमिका और बढ़ जाती है। मेरा जन्म तो उस जनजातीय परम्परा में हुआ है जिसने हज़ारों वर्षों से प्रकृति के साथ तालमेल बनाकर जीवन को आगे बढ़ाया है। मैंने जंगल और जलाशयों के महत्व को अपने जीवन में महसूस किया है। हम प्रकृति से ज़रूरी संसाधन लेते हैं और उतनी ही श्रद्धा से प्रकृति की सेवा भी करते हैं। यही संवेदनशीलता आज वैश्विक अनिवार्यता बन गई है। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि भारत पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में विश्व का मार्गदर्शन कर रहा है।'

> ***आज़ादी के बाद पहली बार आदिवासी समाज से एक महिला राष्ट्रपति देश का नेतृत्व करने जा रही हैं। ये हमारे लोकतंत्र की ताकत का, हमारे सर्वसमावेशी विचार का जीता-जागता उदाहरण है।***
>
> ***- प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी***

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

आदिवासियों का प्रकृति प्रेम

– अमरेंद्र किशोर

आदिवासी समाज अलग किस्म का रहा है। उस समाज के लोकाचार की विधाएँ जंगलों–पहाड़ों और नदियों के साथ समेकित रही हैं। सामाजिक मान्यताएं, सांस्कृतिक समझ और आस्थाओं से जुड़ी संवेदनाएं किसी अन्य प्रकार की अवधारणाओं को पोसती हुई नज़र आती हैं। उनकी सामाजिक प्रवृत्ति और उनका सांस्कृतिक झुकाव सामूहिकता को बढ़ावा देते हुए व्यक्ति से व्यक्ति को जोड़ने का विश्वास पैदा करने में समर्थ दिखता है। आदिवासी जीवनशैली में आबोहवा से लेकर अन्य तरह के प्राकृतिक अवयवों की बेहतरीन भूमिका प्रत्यक्ष तौर से देखी जा सकती है। पेड़ों की पूजा और सुसंगत तरीके से उन्हें काटने का अनुशासन जनजातीय समाज में युगों से है। इस बात को नयी पीढ़ी को समझना होगा। इस समाज की अनगिनत पीढ़ियों ने अपनी सोच, भावनाओं, जीवनशैली, अपने लोकाचार, जीवन–व्यवहार, धर्म, आस्थाओं और संस्कारों में प्रकृति को केंद्र में रखकर जिस कुदरत को बचाया है, उसे बचाकर रखना हमारा बुनियादी कर्तव्य है।

आदिवासी यानी मूल निवासी–प्रकृति का रहवासी। पहाड़ों और जंगलों में बसी बस्तियों का निवासी। दुनिया भर में इस शब्द के साथ यही तस्वीर अंतर्मन में आती है कि ऐसा समाज जो जंगलों में रहता चला आया है। प्रकृति के बीच रहकर, उसके साथ सामंजस्य बिठाकर वह जैव–संसाधनों का प्राचीन और सच्चा रखवाला होता है।[1] एक आदिवासी कुदरत से जुड़े ज्ञान का युगीन विशेषज्ञ माना जाता है और प्रकृति के मनोनुकूल जीवनशैली का वह एक अभिज्ञ, अद्भुत और अनुभवी साधक होता है। इस समाज का जीवन–दर्शन और जंगलों के इन रहवासियों के शाश्वत मूल्यबोध इस बात को बखूबी दर्शाते हैं कि पेड़ों–वनस्पतियों के अलावा अन्य किस्म के प्राकृतिक अवयवों पर आधारित इनका लोकज्ञान अपार और असीमित है। बेशक, इनके समाज की रचना और उसे बनाए

प्रकृति से आत्मिक संबंधः नवंबर 2018 में जंगल को बचाने के लिए एक जन आंदोलन के हिस्से के रूप में ओडिशा के झिंकरगड़ी में महिलाओं ने पेड़ों को गले लगाया।

Academy For Education & Training Pvt. Ltd. Delhi

रखने की प्रतिबद्धता इतनी बेमिसाल होती है जो इनकी पहचान के विभिन्न सम्बोधनों में भी इन्हें प्रकृतिजीवी होना बताता है।[2]

इसमें कोई शक नहीं कि जीवन का तत्व–बोध आदिवासी समाज से बेहतर भला कौन जानता है, जो कहता है, सेनगे सुसुन, काजिगे दुरंग...[3] यानी चलना नृत्य है और बोलना गीत–संगीत है। यही जीवन है। जी–तोड़ मेहनत के बाद देर रात तक मौसम की परवाह किए बिना गांव के सारे लोगों का अखड़ा (सार्वजनिक खुला स्थल) में साथ–साथ नाचना और गाना चलता है। बसंत में सरहुल खुशियों का पैगाम माना जाता है जब प्रकृति पूरे यौवन पर होती है। फसलों से घर और फलों–फूलों से जंगल भरा रहता है। कितना खूबसूरत है यह सुनना कि प्रकृतिजीवी आदिवासी ऐसा मानते हैं कि प्रकृति किसी को भूखा नहीं रहने देती है।

आदिवासी शब्द का प्रयोग मूलतः उन निवासियों के लिए किया जाता है जिनका उस भौगोलिक क्षेत्र के ज्ञात इतिहास से पुराना संबंध रहा है, जो क्षेत्र सदियों से घनघोर जंगलों से आच्छादित रहे हैं।[4] इस इंसानी समूह का इतिहास जंगलों के बढ़ने और समृद्ध होने का इतिहास है।[5] उन जंगलों–ज़मीनों–जल संकायों–नदियों को बचाने और उन्हें सम्पन्न किए जाने का इतिहास है, न कि दो राजाओं के बीच परस्पर लड़ाईयों के पराक्रम का इतिहास है। यदि आदिवासियों को 'जनजाति', 'वनवासी', 'गिरिजन', 'ऐबोरिजिनल', 'इंडिजिनस', 'देशज' आदि नामों से पुकारते हैं तो इन तमाम शब्दों और सम्बोधनों के अपने तर्क हैं जो कहीं न कहीं से उन्हें जल–ज़मीन–जंगल और जानवर से भरी सम्पदाओं का सबसे करीबी होना साबित करता है।[6] इस सम्बन्ध में अंतरराष्ट्रीय श्रमिक संगठन (आईएलओ) के कन्वेंशन में आदिवासियों के बारे में व्यक्त उस मत का उल्लेख ज़रूरी है जो जंगलों के इन रहवासियों की पूरी आबादी को दो भागों में बाँट कर देखता है। 'पहला भाग उन देशावरी लोगों का है जो इंडिजेनस कहे जाते हैं।'

इंडिजेनस होना ही ज़मीन से जुड़कर ज्ञान की उन परम्पराओं को समृद्ध करना है जो इनके जीने का आधार भी है और इनकी ताकत भी। कन्वेंशन में आगे वर्णन है कि 'इंसानी आबादी के बीच कुछ ऐसे वंश हैं जो उपनिवेशकाल में या राज्य की सीमाओं की स्थापना के समय अपने खास भौगोलिक क्षेत्र में रहते थे। जो वंशानुगत प्रवाह में अपनी ज़मीन, अपने इलाके और एक खास क्षेत्र में तभी से रहते चले आ रहे हैं।' यानी उनकी बसाहटों का कोई निश्चित कालखंड तय नहीं है बल्कि सभ्यता के विकसित होने की प्रक्रिया में आदिवासी भी जंगलों और पहाड़ों के शरणागत हुए। दिलचस्प पहलू यही है कि उनकी युगीन जीवनशैली की श्रेष्ठता इतनी लुभाती है कि पादरी से नृविज्ञानी बने वेरियर एल्विन कहते हैं कि 'आदिवासी समाज और सभ्यता तथाकथित सभ्य कही जाने वाली आधुनिक जातियों से कहीं ज़्यादा श्रेष्ठ है।' यह उनका व्यक्तिगत अनुभव है जो उनकी तमाम कृतियों में बार–बार खुलकर सामने आता है।

जनजातीय सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था अपने स्वशासन के लिए स्वनाम धन्य है। देश की तमाम मुल्की लड़ाइयों में इसी स्वशासन को लेकर उनकी संवेदनशीलता बार–बार कोल–मुंडा से लेकर दर्जन भर आदिवासी जातियों को उकसाती रही है। क्योंकि आदिवासियों की धारणाएं अपने समाज की मज़बूती के जरिए उस मानवता को बरकरार रखने की मंशा रखता है जहाँ इंसान ही नहीं बल्कि तमाम प्राकृतिक संसाधन जीवंत होते हैं। उनका स्वशासन व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामूहिक व्यवस्था है। मतलब उनके समाज में सत्ता व्यक्ति–केंद्रित नहीं होती है। इससे उनके रीति–रिवाज, संस्कृति और भाषा की अस्मिता जुड़ी होती है।[7] सामूहिकता आदिवासी समाज की आत्मा है, पूजा का विधान भी सामूहिक है। इनमें व्यक्ति पूजा नहीं है, कोई पुरोहित नहीं है। विवाह की रस्म में आदिवासी लोग लड़की खरीदते हैं। इनमें पुजारी बनने की भी एक रस्म होती है। वे मुर्गी की पूजा करके उसे छोड़ देते हैं। शाम को वह जिसके घर में घुस जाए, उसी घर का स्वामी तीन साल के लिए पुजारी हो जाता है। ऐसी न जाने कितनी रस्में हैं जो मनुष्य और पशु–पक्षियों के बीच के तारतम्य को दर्शाती हैं।

आदिवासियों के प्रकृतिजीवी होने की कहानी भी रोचक है। यह उनके पूर्वजों की पसंद का नतीजा है। एक नज़र हज़ारों साल पहले के इतिहास पर–आखेट से आगे बढ़कर जब समूची सभ्यता पशुपालन और बाद में कृषि अपनाना पसंद कर रही थी तो देश की एक बड़ी आबादी जंगलों में ही रह गई। परिवार, निजी संपत्ति और राज्य की उत्पत्ति में फ्रेडरिक ऐंगल्स लिखते हैं कि 'ध्यान देने की बात है कि बर्बर युग से आगे कुछ पशुओं को पालतू बना चुके आदिम समाज के बीच खेती की प्रवृत्ति शुरू हुई तो सब के सब खेती–किसानी या पशुपालन से नहीं जुड़े।' बल्कि सभ्यता के एक बड़े हिस्से जंगलों में रहकर अपनी आदिमता में रहना पसंद किया। उन्होंने कृषि कर्म आंशिक तौर से अपना लिया क्योंकि वे अपने गोतिया लोगों के संपर्क में ज़रूर थे और लम्बे कालानुक्रम में जंगलों में ही शिकार–आखेट, वनोपज संग्रह करते हुए बांस–खरपतवार से अपने रिहाइश के निर्माण से ज़िन्दगी जीने लगे। इस निर्माण की अलग–अलग शैली उभर कर सामने आयी जो स्थानीय मौसम–बारिश से लेकर उपलब्ध जंगल के संसाधनों पर निर्भर थी।[8] जैसे झारखण्ड में बंदरों को मारकर खाने वाले बिरहोरों ने साखू के पत्तों से घर बनाया तो तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल में फैली नीलगिरि की पहाड़ियों में टोडा आदिवासियों ने अपना घर बिलकुल अंडाकार आकार में बनाया। क्योंकि वहां बारिश अधिक होती है तो छतों से पानी का तत्काल बहना ज़रूरी है। गुफाओं से निकलकर सभ्यता का स्वाद सूंघते आदिवासियों की यह पहली टेक्नोलॉजी थी, जो आज भी मौजूद है।

खेती अपना चुकी इंसानी आबादी ने घरों के निर्माण के साथ बस्तियां बसाकर सभ्यता के कई चरण पूरे किए।[9] जो जंगलों में थे, उन्होंने गृहस्थी की धीमी प्रक्रिया को बरकरार रखा जबकि

ग्राम के रहवासियों ने अनाज कूटने और पीसने के साधनों का आविष्कार किया। सामाजिक व्यवस्था और इंसानी अस्तित्व के बारे में आईएलओ के कन्वेंशन में आगे व्याख्या है कि 'इन लोगों ने अपनी सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संस्थाओं को बनाए रखा है, चाहे उनकी कानूनी स्थिति जैसी भी रही हो या वर्तमान में वह स्थिति कुछ भी हो। इस प्रकार उनकी देशज आस्थाएं, स्वाभिमान और मूल्य ही उनकी पहचान है।' दूसरे वर्ग में ट्राइबल पीपुल के तौर पर व्याख्या है। इस वर्ग का नगरीकरण या आधुनिकीकरण से कोई वास्ता नहीं था। यानी राज्य की अवधारणा के तमाम घटकों और गुणकों से वे सब के सब दूर रहे। वे जंगलों के थे, जंगलों में थे और जंगलों के लिए थे। लिहाजा, उनकी जीवनशैली में प्रकृति का खालिसपन आज भी देखने को मिलता है। नागर समाज इन आदिवासियों को लेकर जैसा भी लिखे या जो भी प्रचारित करे लेकिन वे आदिवासी किसी भी सूरत में अपने किसी असभ्य व्यवहारों के बदनाम नहीं थे। वे अपने ठिकानों में, अपनी सीमाओं में दुर्दांत भी नहीं थे। भावातिरेक या महत्वाकांक्षाओं के लिए आक्रांता होना उनकी गतिविधियों का अभिप्राय नहीं था। वे धार्मिक आचरणों या आजीविका की प्रक्रियाओं के बीच आक्षेपक नहीं थे, बशर्ते उन्हें यह आशंका न सताये कि उनका अस्तित्व खतरे में है।

जंगलों और पहाड़ों में रहने वाले उन आदिवासियों का अपना साहचर्य से भरा समाज रहा है। एक बेजोड़ सांस्कृतिक मूल्यबोध रहा है। प्राकृतिक अवयवों पर आधारित आर्थिक तंत्र रहा है जो बाद में खेती–पशुपालन और आखेट की एक मिश्रित व्यवस्था में तब्दील हो गया था। यानी 'उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक स्थितियाँ उन्हें राष्ट्रीय समुदाय के अन्य वर्गों से अलग करती हैं।' कहने का आशय है कि जिन्हें आज हम आदिवासी कहते हैं, जनजाति कहते हैं, जिन्हें वनवासी भी कहा जाता है, उनका समाज अलग किस्म का रहा है। उस समाज के लोकाचार की विधाएँ जंगलों–पहाड़ों और नदियों के साथ समेकित रहीं हैं। सामाजिक मान्यताएं, सांस्कृतिक समझ और आस्थाओं से जुड़ी संवेदनाएं किसी अन्य प्रकार की अवधारणाओं को पोसती हुई नज़र आतीं हैं। उनकी सामाजिक प्रवृत्ति और उनका सांस्कृतिक झुकाव सामूहिकता को बढ़ावा देते हुए व्यक्ति से व्यक्ति को जोड़ने का विश्वास पैदा करने में समर्थ दिखता है।

Elite Academy for Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

दिलचस्प बात यही है कि सभ्यताओं के विकसित होने के दौर से दूर आदिवासियों ने जिस जीवनबोध पर कायम रहकर ज़िन्दगी को सुखद बनाया किन्तु कहीं भी उपभोग और विलासिता की गुंजाइश नहीं रहने दी। संग्रह की संकल्पना और मनोभावों को पूंजी या संपत्ति से कभी नहीं जोड़ा। बल्कि भोजन संग्रह और अनाज जुटाने तक खुद को सीमित रखा था। उनके बीच वर्चस्व की लड़ाई अपनी वरीयता को लेकर रही, संपत्ति के नाम पर उन्होंने सब को समान समझा। जीने का अधिकार हर किसी को है और अपनी शर्तों के साथ हर कोई जीता है। महज मनोरंजन के वक्त

सरहुल पर्व मनाते सरना आदिवासी

वे एकजुट नहीं होते हैं बल्कि खेती–किसानी–अनाज निकालने से लेकर शिकार करने वे झुण्ड में जाते रहे हैं। यह आदिवासी जीवन–दर्शन का मुख्य फलसफा है। भारत के संदर्भ में आदिवासी जीवन के प्राचीन जीवनशैली से लेकर आज़ादी मिलने के बहुत दशकों बाद तक क्रमागत ज़िन्दगी के कुछ अबूझ वैशिष्ट्य लक्षण रहे हैं। यहाँ तक कि युवापन के दस्तक देने के ठीक पहले शयन की जो व्यवस्था थी, वह भी सामूहिक स्तर पर चलायी जाती थी। भोजन–उत्सव–मनोरंजन और मैथुन की सामूहिक व्यवस्था सर्वानुमति मूलक व्यवस्था में संचालित होने से किसी आदिवासी में एकाकीपन नहीं आता था।

आदिवासी जीवनशैली में आबोहवा से लेकर अन्य तरह के प्राकृतिक अवयवों की बेहतरीन भूमिका प्रत्यक्ष तौर से देखी जा सकती है। इनके पूर्वज हवाओं में प्राण–वायु बनकर रहते हैं और मौसमी घटाओं में जा घुलते हैं। इसलिए पूर्वजों से लगाव रखने के लिए हवाओं का शुद्ध होना इनकी ज़िन्दगी की प्राथमिकता है तो बादलों का निरंतर आते रहना उनकी आत्मिक इच्छा होती है। इन दोनों के लिए पेड़ों की मौजूदगी चाहिए। पेड़ों का महत्त्व आदिवासियों के जीवन का मर्म है। वह उनमें अपनी आत्मा तलाशते हैं। ऐसी मान्यता है कि उन पेड़ों की शाखाओं में सारे कुटुम्बों का वास रहता है। उन मृतात्माओं की यादें गाँव की सरहद पर सजी शिलाओं में समाहित हो जाती हैं जिसे 'ससनदीरी' कहते हैं।[10] ससनदीरी उनके अपनों का प्रतीक है जो गांवों की सीमा तय करता है। इसी प्रक्रिया में वे पहाड़ों को पूजते हैं। उसका मनुहार करते हैं कि हमारे साथ बने रहिये। हर नए काम के पहले पत्थरों में रहते अपने कुलदेवताओं को और पूर्वजों को याद किए जाने का रिवाज़ है और जंगलों में जाने के पहले किसी शिला–पूजन से कोई आदिवासी समाज अछूता नहीं रहता है।

आज्ञा लेना और पूर्वजों को मनाकर चलना खास तरह की वैचारिक पद्धति है जो टोटम के तौर पर जानी जाती है। उस टोटम भी वनस्पतियों का उपयोग है, उन फूल–पतियों का सम्मान है जो खास मौसम में खिलते हैं, फूलते हैं और फलते हैं। टोटेम के लिए महत्वपूर्ण फूल आदिवासियों में पूजनीय बन जाते हैं।[11] टोटेम की मान्यता और उसके प्रति लोक आस्थायें बेहद महत्वपूर्ण होतीं हैं। किवदंतियों के मुताबिक जब महाभारत का युद्ध चल रहा था, तब आदिवासियों ने युद्ध में कौरवों का साथ दिया था, जिस कारण कई मुंडा सरदार पांडवों के हाथों मारे गए थे। इसलिए उनके शवों को पहचानने के लिए उनके शरीर को साल के वृक्षों के पत्तों और शाखाओं से ढका गया था। इस युद्ध में ऐसा देखा गया कि जो शव साल के पत्तों से ढंके गए थे, वे तमाम शव सड़ने से बच गए थे और बिलकुल ठीक थे। किन्तु जो अन्य चीजों से ढंके गए थे, वे तमाम शव सड़ गए थे। ऐसा माना जाता है कि इसके बाद साल के पेड़ों और पत्तों पर आदिवासियों का विश्वास बढ़ गया। ऐसा भी माना जाता है कि आधुनिक युग में सरहुल पर्व के रूप में उसी घटना को याद करते हुए मनाया जाता है जिसमें साल के पेड़ और पत्ते सबसे ज़्यादा महत्त्व रखते हैं। लेकिन झारखंड के आदिवासियों का ऐसा कहना है कि महाभारत युद्ध के बहुत पहले ही यह वृक्ष उनकी आस्थाओं का केंद्र बन चुका था।

आदिवासियों का कल्पवृक्ष महुआ है।[12] जैसे हिन्दुओं में तुलसी की पवित्रता की एक से एक आख्यिकाएँ हैं वैसे ही आदिवासियों के बीच महुआ पवित्र है।[13] यह फूल आदिवासियों की खुशियों का मीटर है क्योंकि पारम्परिक अर्थव्यवस्था की रीढ़ के तौर पर इसकी मान्यता रही है। यानी महुआ अच्छा तो साल भर की गृहस्थी का काम अच्छा। नहीं तो सभी तरह के खर्चे टालने पड़ते हैं। महुआ की तरह प्रकृति के तमाम जीव और वनस्पतियां आदिवासियों के लिए कितनी महत्वपूर्ण हैं, ऐसी जिज्ञासा ज़रूर होती है। ओडिशा के सीमा के साथ जुड़े झारखण्ड के कोल्हान इलाके में परम्परा है कि घर के नए दामाद या बेटा केकड़ा पकड़ने खेतों में जाते हैं। उनके द्वारा पकड़े गए केकड़े को साल पेड़ के पत्तों से लपेटकर रसोई में चूल्हे के सामने उसे टांग दिया जाता है। आषाढ़ आते–आते केकड़ा कब का मर चुका होता है और तब खेतों में बीज बोने के समय केकड़ा का चूर्ण बनाकर बीज के साथ खेत में बोया जाता है। इस परम्परा को लेकर ऐसी मान्यता है कि केकड़ा के पैर की तरह फसल में वृद्धि होगी। आदिवासी समाज में ऐसी मान्यता है कि ऐसा करने से घर में खुशहाली आती है। फसलों में वृद्धि के लिए समुचित बरसात का होना भी ज़रूरी है। झारखंड के पलामू और उत्तर प्रदेश के सोनभद्र ज़िलों में उरांव जनजाति के पुजारी (पाहनों) ढोल–मांदर बजाते हुए करीब की नदी, तालाब या कुएं से दो घड़ों में पानी लाकर सरनास्थल के उत्तर और दक्षिण दिशा में उन्हें रखा जाता है। पानी की गहराई साल के तने से नापी जाती है। फिर दूसरे दिन घड़े में पानी को उसी तने से नापा जाता है। पानी के कम होने या ना होने पर इस साल वर्षा का अनुमान किया जाता है।

सरहुल पर्व मना रहे आदिवासियों की एक प्रथा खासतौर से उल्लेखनीय है जो इनके प्रकृति प्रेम की जीवंत बानगी है। ओडिशा में पूजा के दिन उनके पुजारी बैगा से आशीष लेकर घड़े में खिचड़ी पकाई जाती है। इनकी मान्यता है कि घड़े के जिस ओर से खिचड़ी उबलना शुरू हो, उसी दिशा से बरसात का आगमन होता है यानी उसी दिशा से बादल आएंगे, बरसेंगे। इसके बाद जब बैगा और उनके साथ अन्य पुजारी खिचड़ी खाते हैं, तो उनके पीछे की ज़मीन पर थोड़ी दूर पर आग जलायी जाती है। यदि बैगा पुजारी आग की गर्मी बर्दाश्त करते हुए शांतिपूर्ण ढंग से खिचड़ी खाते हैं, तो गांव में सुख–शांति रहती है, ऐसा मान लिया जाता है। किन्तु जहां आग या गर्मी बर्दाश्त कर पाना मुश्किल होता है तो ऐसा समझा जाता है कि गांव में मच्छर, बीमारी सहित अन्य प्रकार का कहर आने वाला है। इसलिए सरहुल सरना पूजा आदिवासियों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। उत्तर तथा पूर्वी भारत के राज्यों झारखण्ड,

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. Delhi

बिहार, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश के आदिवासियों के बीच करम का पेड़ बेहद पवित्र माना जाता है। सावन बीत जाने के बाद कोई कुंवारी कन्या करम के पेड़ जंगलों से काटकर अपने गाँव में लाती है। किसी सार्वजनिक स्थल पर उसे स्थापित किया जाता है और उसके बाद अनाज और महुए की शराब से करम वृक्ष की पूजा की जाती है। सुहागिनें संतान मांगतीं हैं और परिवार की समृद्धि की प्रार्थना करतीं हैं।

प्रकृति–पूजा जनजातीय समाज का पहला धर्म और सबसे सशक्त पक्ष है। सरना का मतलब ही है प्रकृति पूजा, जिसके अनुसार सरना–धर्म के तीन देवता हैं, पहला इकिर बोंगा जो जल देवता हैं। दूसरे बुरू बोंगा जो पहाड़ के देवता हैं और तीसरा सिंग बोंगा यानी सूर्य देवता। इस प्रकार, आदिवासी लोग पहाड़, नदी और सूर्य की पूजा करते हैं। क्योंकि पहाड़–नदी और सूर्य जनजातीय समाज के अस्तित्व के तीन सूत्रधार हैं। पहाड़ों में जंगल है और जंगलों के वनोपजों से ज़िन्दगी चलती है। जंगलों में शिकार करते हैं। वहीं अपने पूर्वज रहते हैं। नदियों के किनारे दुनिया की तमाम सभ्यताओं ने जन्म लिया। प्रागैतिहासिक मानव के प्रस्तर–हथियार नदियों के किनारे मिलते रहते हैं। भारत की आदिम सभ्यता भी नदियों के किनारे की देन है। नदियों का पानी और जलचर आदिवासी समाज को पोसते रहे हैं। भारत की पारम्परिक सिंचाई पद्धति में नदियों के भरोसे इंसानी समाज की निर्भरता के न जाने कितने उदाहरण हैं। सूर्य की आराधना संताल परगना से लेकर सिंहभूम के कोल्हान क्षेत्र में देखी जा सकती है। सूर्य इतने महत्वपूर्ण देवता हैं जो सुरक्षा और सेहतमंद रहने का विश्वास हैं। झारखण्ड के पाकुड़ ज़िले के लिट्टीपाड़ा की संताल महिलाओं ने अपने शरीर में इस आस्था के साथ अपने गले के नीचे सूर्य चिन्ह का गुदना गुदवाया कि इससे जानलेवा कोरोना उनके पास नहीं आएगा। सच में यह आस्था का सवाल है। आस्थाएं परम्परा के पंख हैं, उनके पांव हैं।

गुदना में सूर्य–मछली के अलावा फूलों को भी दर्शाया जाता है। क्योंकि आदिवासियों के जीवन के सार–तत्व यही तीनों हैं। महुआ के माखनी फूल लम्बे समय तक रह जाते हैं। अकाल के दिनों में इसे खाकर आदिवासी अपनी ज़िन्दगी बचाते रहे हैं। सरई का फूल सफेद रंग का होता है, जो अहिंसा और शांति का भी प्रतीक है। सरई का फूल गुच्छों में खिलता है, आदिवासियों की तरह। वे भी समूह में नाचते–गाते हैं। साल वृक्षों के उपवन को सरना टोंका कहा जाता है। यहाँ प्रकृति की देवी सरना बूढ़ी का निवास माना जाता है और साल वृक्ष के नीचे उसकी पूजा की जाती है। सरना बूढ़ी इनकी मादा पूर्वज होतीं हैं जो मातृ–पक्ष की आदि–देवी होती हैं। इनकी कृपा मायने रखती है तभी तो आदिवासी लोग शादी–विवाह में इसकी डालियों से मंडप का निर्माण करते हैं। मंडपों का निर्माण बाद के सालों में हुआ। इसके पहले सरना टोंका के नीचे आदिवासियों की शादियां होतीं थीं। उसके पहले युवक–युवती के सामूहिक मिलन स्थल का केंद्र हुआ करता था। बेशक पत्तों और वनस्पतियों की धार्मिक और आनुष्ठानिक और सामूहिक महत्ता किसी भी हाल में कमतर नहीं है। चाहे कोल हों, मुंडा हों या उरांव आदिवासी–इनके बीच सन्देश सम्प्रेषण का उम्दा और सटीक माध्यम साल–सरई के फूल का सांस्कृतिक महत्व है। अंग्रेज़ी शासन में जब भी मुल्की लड़ाईयां हुईं, नगाड़े बजाकर एकजुट होने के बदले संताल विद्रोहियों ने साल के फूल भेजकर विद्रोह में एकजुट होने का सन्देश भेजा। बेशक यह इतना पवित्र और पावन फूल है जिसके ज़रिए भेजे गए सन्देश को पूर्वजों का आदेश माना गया। यहां बताना ज़रूरी है कि इस फूल के बिना आदिवासियों का कोई मांगलिक कार्य नहीं होता। लेकिन जब आपस में दाम्पत्य सम्बन्ध तोड़ना है तो भरी सभा में पत्नी साल के एक पत्ते को अपने दाँतों से फाड़ देती है। इसे सम्बन्ध–विच्छेद समझ लिया जाता है।

सरहुल के दिन सरना स्थल में बैगा पुजारी धरती माता और सूर्यदेव की पूजा–अर्चना करते हैं। लोकमान्यता यह है कि बरसात आने के पहले यही पूजा पूरी कर आदिवासी खेती–बाड़ी का काम शुरू करता है। वे अच्छी खेती होने और गाँव समाज की खुशहाली के लिए प्रार्थना करते हैं। पाहन राजा नये फल और सात प्रकार की सब्ज़ियों सहजन, कटहल, पुटकल, बड़हर, ककड़ी, कचनार, कोयनार पकाकर, मीठी रोटी पहले धरती मां को चढ़ाते हैं। पूजा के बाद एक दूसरे को सरहुल की बधाई दी जाती है। इसके बाद मांदर की थाप में लोग सरहुल की शोभायात्रा निकालते हैं। उसके अगले दिन तीसरे दिन फूलखोंसी की जाती है। युवक अपनी मनपसंद युवती के जूड़े में सरई के फूल खोंसकर अपने प्रेम का इज़हार करता है। चूँकि सरहुल महापर्व में प्रकृति यानी सखुआ वृक्ष की पूजा कर नववर्ष का आरंभ होता है, इसलिए नयी ज़िन्दगी की शुरुआत के तौर पर युवा अपने प्रेम का प्रदर्शन करते हैं। इसी तरह त्सुखेन्यी महोत्सव नगालैंड के चखेसांग नागाओं द्वारा बहुत उत्साह के साथ मनाया जाता है। फसलों की कटाई के बाद खेती में साथ निभाने के लिए मौसम को आदिवासी धन्यवाद देते हैं। बंगाल–झारखंड और ओडिशा के संताल–मुंडा और कुड़मी जनजातियों के बीच ऐसा ही एक पर्व सोहराय है जो मौसम और प्रकृति के लिए कृतज्ञता प्रकट करने का पर्व है।

बादलों की गतिविधियां आदिवासी समाज के लिए आकर्षण भी है, उनका आलम्बन भी है और रहस्य भी है। उनके लिए प्रकृति का सीधा मतलब है धरती के जल–जंगल–ज़मीन–जन और जानवर–इनके ऊपर के नीले आवरण का अनहद फैलाव और उसी फैलाव को नापते सफेद–काले–धूसर बादल होते हैं। प्रकृति इन्हीं से बनती है। हवाएं बहती हैं, कभी शरद में बर्फीली बनकर, कभी बसंत में नरम होकर, कभी जेठ में गरम होकर तो कभी आषाढ़ में तल्ख रहकर– कभी बहते बादळ तो कभी बरसते बादल– कहीं बहती नदी तो कहीं और झरने की गिरती धार। जैव–विविधता वाले घने–घनघोर वनों का विस्तार, औषधियों वाले पेड़–पौधों को आधार देती ऊंची–नीची और समतल धरती इनकी अपनी होती है

तो 'जान देंगे, ज़मीन नहीं देंगे' की कसमें दोहराई जाती हैं। एक खास संदर्भ यह भी है कि हवाओं की गति, दिशा और बहने का अंदाज आदिवासियों के लोकज्ञान का व्यापक संदर्भ है। वे बादलों के रंग के गहरे जानकार होते हैं। इस जानकारी से इस बात की तसल्ली होती है कि कौन–से बादल बरसने वाले हैं, कौन महज गरजने वाले हैं। बादलों से सम्बंधित यह ज्ञान कालजयी है।

आदिवासियों का वनस्पतियों से लेकर प्राणियों और परिंदों से सरल और सीधा नाता है।[14] वे मौसम के मिजाज़, जंगल की भावनाओं को समझते हैं। आधुनिकता की जगमग से अँधियारा ज़रूर छँट रहा है लेकिन इन बढ़ती आधुनिक सुविधाओं के बीच अपना जीवन जीना और आसपास के जीव–जंतुओं के साथ साहचर्य की संस्कृति में उत्सवजीवी होना ही आज भी आदिवासी समाज की ज़िन्दगी की मूल भावना होती है। इन पेड़ों और जल–संसाधनों, सब पर आश्रित सैकड़ों किस्मों के जीव–जंतु, पशु–पक्षी, कीट–पतंग इतने महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं कि बस्तियों में रहने वाले आदिवासी इन सबको अपने अलग–अलग गोत्र नाम से जोड़ लेता है। जो समूह जिस जानवर–जीव को अपना कुल–गोत्र का प्रतीक मान लेता है, वह उसकी हत्या नहीं करता।[15] जैसे झारखंड के कच्छप गोत्र के आदिवासी कछुए का शिकार नहीं करते। आंध्रप्रदेश के गोदावरी तटीय इलाकों, खासतौर से नल्लामल्ला की पहाड़ियों के आदिवासी बाघों का शिकार नहीं करते, चूंकि बाघ उनके लिए बेहद पवित्र और पूर्वजों के संपर्क में रहने वाला जानवर है। उसी राज्य में सोलिगा आदिवासी का अपने प्राकृतिक पर्यावरण के साथ अत्यधिक विकसित संबंध है, और वे बाघों की पूजा करते हैं।[16] पारिस्थितिकी के संतुलन को लेकर यह आदिवासी समाज की शानदार समझ का बेमिसाल नज़ीर है। क्योंकि इलाके विशेष के हर परिवार को हर तरह के जानवर या परिंदों के शिकार की छूट नहीं दिए जाने से पशुओं और पक्षियों का अंधाधुंध शिकार नहीं हो पाता है। कहीं मछली मारना एक समुदाय विशेष के लिए अपशकुन है तो कहीं खास प्रजाति की चिड़ियों के शिकार पर प्रतिबंध है। मुंडा आदिवासी एक विशेष प्रजाति के हेमरोम सांप, भुटकुवार मछली किसी भी सूरत में नहीं मारते तो संथाल आदिवासी जंगलों में रहने वाली गाय मुर्मू, चांदे नामक छिपकली और बोआर प्रजाति की मछली नहीं मारते।

आदिवासी का मतलब महज पहाड़ों और जंगलों में रहना नहीं है बल्कि प्रकृति के बीच का इंसान, उसे जोगाकर, संभालकर–संभलकर कुदरत के अवयवों को सालों–साल तक बचाकर रखने वाला मनुष्य ही आदिवासी है। आधुनिक ज़माने में अपने देश में जिन 'सेक्रेड ग्रोव' यानी पवित्र उपवन की अवधारणा को बेहद सम्मान से स्वीकार किया जाता है उसे आदिवासी समाज के मूल चिंतन और उनकी जीवनशैली के परिप्रेक्ष्य में देखना ज़रूरी है। ये तमाम 'ग्रोव' अलग–अलग आकारों के जंगल के टुकड़े हैं, जो धार्मिक सद्भावनाओं और मंशाओं के साथ आज संरक्षित हैं।[17] ये आमतौर पर महत्वपूर्ण धार्मिक अर्थ रखते हैं। शिकार और पेड़ों की कटाई से इन्हें मुक्त रखा जाता है। पेड़ों की पूजा और सुसंगत तरीके से उन्हें काटने का अनुशासन जनजातीय समाज में युगों से है। इस बात को नयी पीढ़ी को समझना होगा। इस समाज की अनगिनत पीढ़ियों ने अपनी सोच, भावनाओं, जीवनशैली, अपने लोकाचार, जीवन–व्यवहार, धर्म, आस्थाओं और संस्कारों में प्रकृति को केंद्र में रखकर जिस कुदरत को बचाया है, उसे बचाकर रखना हमारा बुनियादी कर्तव्य है।

इसमें कोई दो राय नहीं कि देश की तकरीबन 10 करोड़ 40 लाख की जनजातीय आबादी के धर्म का सैद्धांतिक और व्यावहारिक पक्ष बिलकुल प्रकृति पर आश्रित है। इनका रहन–सहन, आर्थिक तंत्र, सामाजिक लोकाचार, धार्मिक कर्मकांड, राजनीतिक व्यवस्थाएं और जीवन के तमाम अलौकिक सन्दर्भ प्रकृति के बिना असंभव हैं। ज़रूरी हैं इन सब को जानना, समझना और किसी हद तक उन्हें अपनाना होगा।

फुटनोट

1. (Shivamurthy, Y.L., H.K. Rashmi, Hassan S. Rajani, and Doddaiah Narayanappa. 2017. A Comparative Study on Sociodemographic Characteristics between Tribal and Non-Tribal Children. Pediatric Education and Research 5: 129.)
2. (Honoring Tribal Spirituality in India: An Exploratory Study of Their Beliefs, Rituals and Healing Practices Shannal Rowkith and Raisuyah Bhagwan)
3. (Undertrials.in_.Jharkhand.pdf (sanhati.com)
4. (Xaxa, V. 1999 'Tribes as Indigenous People of India', Economic and Political Weekly 34(51): 3589-3595)
5. (Omvedt, G. (1988) 'Review: Are 'Adivasis' Subaltern?', Economic and Political Weekly, 23(39): 2001-2002: 2001)
6. Sunder, N. ,2009, Legal Grounds: Law, Politics and Practices in Jharkhand)
7. D. & S. Dasgupta 2011, The Politics of Belonging in India: Becoming Adivasi, London and New York: Routledge
8. Ancient Society, L.H. Morgan, pp 465-66
9. Ancient Society, L.H. Morgan, pp 468-69
10. Das, Subhashis. Some Salient Features of the Surface Architecture of Megaliths of Hazaribagh. Purattatva. 2008
11. Dagba, Benjamin I., Leoskali N. Sambe, and Simon A. Shomkegh. 2013. Totemic beliefs and biodiversity conservation among the Tiv People of Benue State, Nigeria. Journal of Natural Sciences Research 3: 145–49
12. Manav Evam Sanskriti: Dr. Shyama Charan Dubey, Rajkamal Prakashan, New Delhi
13. Varrier Elvin: Leaves from Jangal, 1936
14. Bhargava, M, (2002). Forest, People and State. Economic and Political Weekly, 37(43); 4440- 46.
15. Dagba, B. I., L. N. Sambe and S.A. Shomkegh, 2013, "Totemic Beliefs and Biodiversity Conservation among the Tiv People of Benue State, Nigeria", Journal of Natural Sciences Research,Vol.3, No.8, pp.145-149
16. Tribal people's presence helps protect tigers - The Hindu
17. Gadgil, M. and Vartak, V.D. ; Sacred groves of India : A plea for continued conservation Journal of Bombay Natural History Society, 72 : 314-320, 1975

(लेखक आदिवासी मामलों के जानकार हैं। लेख में व्यक्त विचार निजी हैं।)

ई–मेलः amarendra.kishore@gmail.com

घुमंतु जनजातियों का विकास एवं नियोजन

–डा. सविता केशरवानी

परम्परागत रूप से ये घुमंतु समुदाय राष्ट्रीय स्तर पर सबसे उपेक्षित, आर्थिक और सामाजिक रूप से वंचित समुदाय है। उनमें से अधिकांश पीढ़ियों से बेसहारा जी रहे हैं और उनका भविष्य अनिश्चित–सा बना रहा है। ऐसे में सरकार द्वारा क्रमबद्ध नियोजन और विकासात्मक ढांचा तैयार कर बहुस्तरीय लाभ देने का प्रयास आवश्यक है जिसमें मूलभूत जानकारी, सामाजिक–आर्थिक प्रस्थिति और जीवन स्तर के विभिन्न मानकों के आधार पर स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, रोज़गार, आय, श्रम, खाद्य सुरक्षा, वित्तीय समावेशन इत्यादि के द्वारा सहयोग दिया जा रहा है और निश्चित ही इनके समावेशी उत्थान का रास्ता तय होगा।

भारतीय भू–भाग के सभी हिस्सों में प्रायः कुछ समुदाय और कबीले बिना किसी बाधा के जीविका और रोज़गार की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान में पलायन, विस्थापन और घूमते–फिरते रहते हैं। परम्परागत रूप से इन्हे घुमक्कड़ जनजाति, बंजारा, विमुक्त और घुमंतु जनजातियों के नाम से जाना जाता है। सामान्य रूप से इन्हे घुमक्कड़ जनजातियां कहा जाता है। घुमक्कड़ जनजातियां वे हैं जिन्हें ब्रिटिश शासन के दौरान लागू किए गए आपराधिक जनजाति अधिनियम के तहत अधिसूचित किया गया था जिसके तहत पूरी आबादी को जन्म से ही 'अपराधी' घोषित कर दिया गया था। स्वतंत्रता पश्चात 1952 में इस अधिनियम को निरस्त कर दिया गया और इस तरह शामिल सभी समुदायों को विमुक्त कर दिया गया। ये घुमक्कड़ जनजातियां निरंतर भौगोलिक गतिशीलता बनाए रखती हैं, तथा एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर पलायन करते हुए गतिशील रहती हैं। कुछ समुदाय स्थायी रूप से विस्थापित होते हैं तथा कुछ समुदायों की गतिशीलता निश्चित स्थानों तक ही होती हैं इन्हे सैद्धांतिक रूप अर्ध–घुमक्कड़ जनजातियों की श्रेणी में रखा जाता है।

समय–समय पर इनके विकास और नियोजन की रूपरेखा तैयार की जाती रही और इनके समग्र कल्याण हेतु आयोग और समितियों का गठन कर विकास हेतु रास्ते खोले गए। इस संदर्भ में

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

बंजारा जनजाति

राजस्थान, मध्य प्रदेश, झारखंड, बिहार और देश के उत्तरी हिस्सों में घुमक्कड़ जनजातियों में से एक जनजाति बंजारा है। यह पूरे देश में घूमते रहते हैं और जीवनयापन करते हुए कहीं भी डेरा जमा लेते हैं। जहां ठहर गए, वहीं के हो गए। पारम्परिक रूप से यह घुमक्कड़ जनजाति है। इन जनजातियों को स्थानीय रूप से बनजारी, वनसरी, वृन्जानी, बेपारी भी बोला जाता है। इन जनजातियों के समूह कंजर, सीस, मदारी, नट, भालू नचाने वाला, बाज़ीगर, पवैरिया, जड़ी–बूटी, पारम्परिक चिकित्सा जैसी आर्थिक गतिविधियों से अपना जीवनयापन करते हैं। इनका इतिहास बहुत पुराना है। कबीर के शब्दों में "वणज करें सो वाणिया।" वणाज से ही वाणज बना। मुगलकाल में अनाज, नमक, तेल, कपड़ा, सूत, कपास से लेकर हीरे–जवाहरात और मोतियों तक के व्यापार का उल्लेख मिलता है। ऐसा भी माना जाता है कि औरंगज़ेब ने जब सैनिक अभियान किया तो उसकी सेनाओं के पीछे लगी ये जनजातियां देश के विभिन्न हिस्सों में पहुंच गईं।

ये जनजातियां घुमक्कड़ होती हैं लेकिन जीवनयापन का तरीका अन्य जनजातियों से उच्च होता है। महिलाओं की पोशाक अत्यंत आकर्षक होती है। घाघरा, ओढ़नी, घुंघरू वाली पोशाक और बटनदार कुर्ता तथा शरीर के सभी अंगों में आभूषण देखे जा सकते हैं। कीमती पत्थर की माला, मोतियों का हार, कांच और लाख की बनी चूड़ियां प्रमुखता से देखी जा सकती हैं। पुरुषों की पोशाक में धोती और मिरजई किस्म का कुर्ता या कमीज़ पहनते हैं। सिर पर सामान्य पगड़ी होती है। बंजारा जनजातियों का खान–पान समिस और निमिष (शाकाहारी और मांसाहारी) दोनों रहता है परंतु ये प्रायः मांसाहारी होते हैं। जनजातीय नियोजन और विकास की मुख्यधारा में लाने के लिए इनके शिक्षा और स्वास्थ्य संबंधी नियोजन के माध्यम से सामाजिक और आर्थिक उत्थान के प्रयास किए जा रहे हैं।

इनके व्यापक सर्वेक्षण और विविध सामाजिक–आर्थिक स्थिति को जानने के लिए वर्ष 2008 में रेनके आयोग का गठन किया गया। इस आयोग के द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के अनुसार भारत में लगभग 1500 घुमक्कड़ एवं अर्ध–घुमक्कड़ जनजातियां और 198 विमुक्त जातियां पाई जाती हैं जिनमें लगभग 15 करोड़ भारतीय हैं। यह जनजातियां वर्तमान में भी सामाजिक एवं आर्थिक रूप से हाशिए पर हैं। कई जनजातियां अभी भी अपने जीने के नैसर्गिक अधिकारों से दूर हैं तथा योजनाओं की पहुंच इन तक नहीं हो पा रही है।

घुमक्कड़ जनजातियों के समक्ष विद्यमान चुनौतियों में सबसे महत्वपूर्ण यह है कि ये जनजातियां एक निश्चित स्थान पर निवासरत नहीं रहती और अपना घर, गृहस्थी, आशियाना सब कुछ समय–समय पर बदलते रहते हैं और इसी प्रकार की गतिविधि एक समय अंतराल के बाद होती रहती है; ऐसे में कई बुनियादी समस्याएं होना लाज़मी है। पारम्परिक रूप से आर्थिक सुरक्षा, आय, रोज़गार के लिए यह जनजातियां ऐसा ही करती थी लेकिन नियोजन और विकास के लिए स्थायी अधिवास होना आवश्यक है तभी मूलभूत सुविधाओं का विकास एवं विस्तार किया जा सकता है। इससे जुड़े ऐसे कई बिंदुओं को चिन्हित किया जा सकता है जो घुमक्कड़ जनजातियों के विकास में बाधा पैदा करते हैं–

- चूंकि ज़्यादातर यह समुदाय एक जगह पर स्थायी आवास बनाकर नहीं रहते, ऐसे में बुनियादी और संरचनात्मक सुविधाओं से वंचित रहते हैं। पेयजल, आवास, स्वच्छता, शिक्षा और स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियों से पीड़ित रहते हैं।
- चलवासी और अस्थायी होने के कारण इनका कोई स्थायी ठिकाना नहीं रहता जिससे उनको स्थायी रूप से सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का पूरा लाभ नहीं मिल पाता तथा खाद्य सुरक्षा और पहचान संकट की भी समस्या बनी रहती है।
- सामाजिक और आर्थिक रूप से राज्यों में इनका स्पष्ट वर्गीकरण नहीं होने के कारण इनकी जातीय पहचान की समस्या बनी रहती है और सरकारी योजनाओं का लाभ प्राप्त करने में कठिनाई आती है।

घुमक्कड़ और विमुक्त जनजातियों के लिए विकास और नियोजन हेतु सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय द्वारा वर्ष 2019 में विमुक्त, घुमक्कड़ और अर्ध–घुमक्कड़ समुदायों के लिए विकास एवं कल्याण बोर्ड (डीडब्ल्यूबीडीएनसीएस) का गठन किया गया जिसका मूल उद्देश्य इन समुदायों के लिए कल्याणकारी एवं विकास कार्यक्रम तैयार कर उन्हें कार्यान्वित करना था; साथ ही, विकास और कल्याण बोर्ड के माध्यम से उन स्थानों अथवा क्षेत्रों की पहचान करना जहां ये समुदाय निवास करते हैं। सरकार का यह भी लक्ष्य है कि विकास की सभी योजनाओं का लाभ उन तक पहुँचाया जाए तथा अन्य आवश्यकताओं के बारे में बेहतर नियोजन तैयार किया जा सके।

विमुक्त और घुमंतु समुदाय के प्राक्कलन के हेतु प्रयास

घुमक्कड़ एवं अर्ध–घुमक्कड़ जनजातियों के कल्याण के लिए समय–समय पर कई कल्याणकारी योजनाओं को लागू किया गया। इस संबंध में जनवरी 2015 में केंद्र सरकार ने इनके कल्याण के लिए भीखू इदाते के नेतृत्व में नेशनल कमीशन फॉर डिनोटिफाइड, नोमेडिक एंड सेमी–नोमेडिक ट्राइब्स का गठन किया। इस आयोग ने वर्ष 2018 में अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंपी थी जिसमें निम्न बिंदुओं को शामिल किया गया–

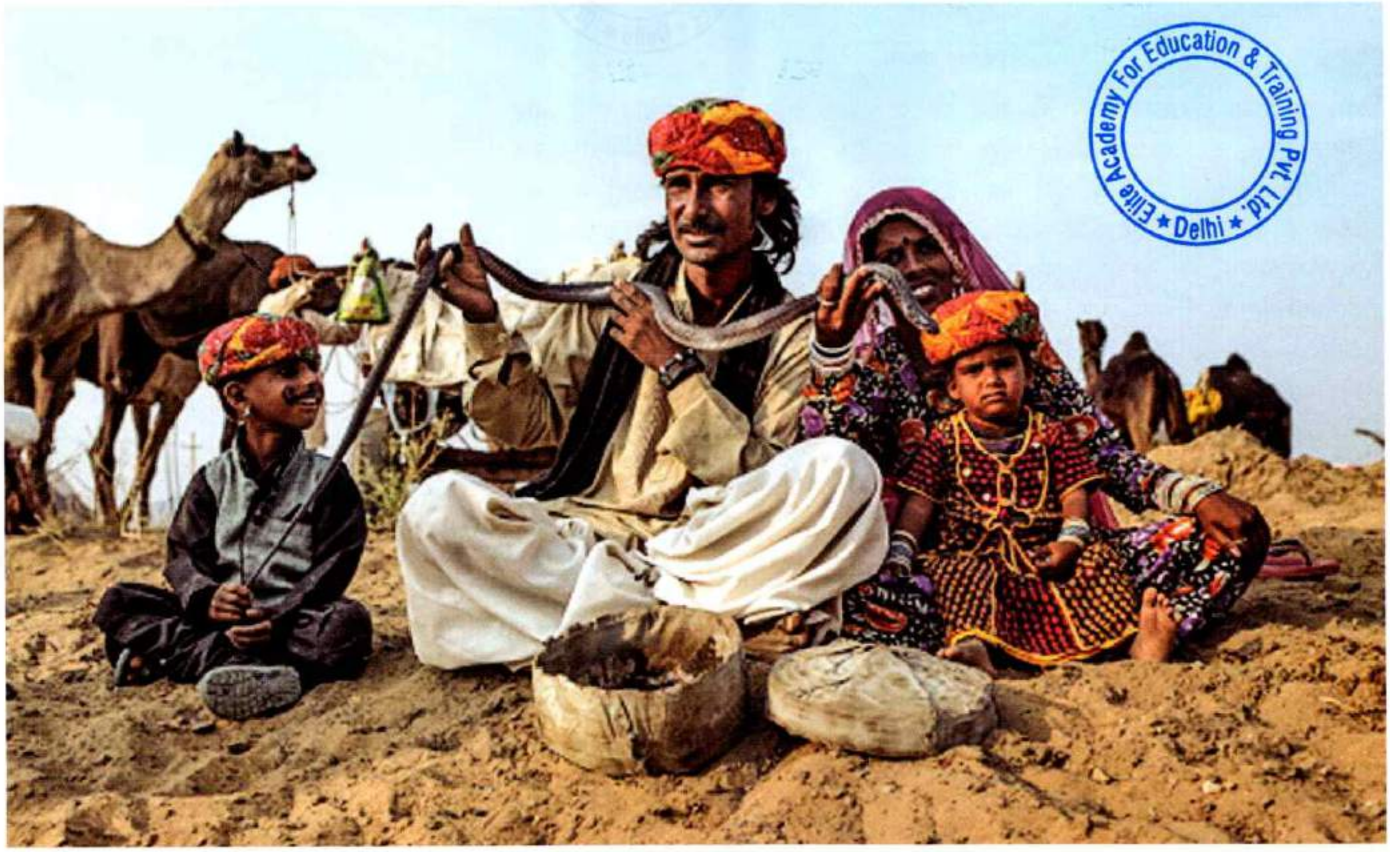

- ये समुदाय सर्वाधिक पिछड़े हैं– इनमें से कुछ जातियां अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग में शामिल हैं। इसके लिए अस्थायी आयोग का गठन किया जाए और राष्ट्रीय स्तर पर सामाजिक–आर्थिक आरक्षण में एकरूपता निर्धारित की जाए।
- प्रत्येक राज्य में इन घुमक्कड़ जनजातियों के लिए अलग विभाग और निदेशालय गठित किया जाना चाहिए।
- इन जनजातियों में शामिल कई समुदायों को आरक्षण का लाभ नहीं मिलता, उन्हें आरक्षण श्रेणी में शामिल किया जाए। अलग–अलग राज्यों में ये कई श्रेणियों में विभक्त हैं, उन्हें राष्ट्रीय स्तर पर एक श्रेणी में लाया जाए।
- जनगणना में इनकी जातिवार जनसंख्या का प्रकाशन किया जाए जिससे योजना, बजट और लाभ का आंकलन किया जा सके।
- इन समुदायों को संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया जाना चाहिए तथा उनकी राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर प्रतिनिधि और विकास कार्यों की लगातार समीक्षा होनी चाहिए।
- विमुक्त एवं घुमक्कड़ समुदायों को होने वाली परेशानियों के बारे में जनप्रतिनिधियों, प्रशासकों तथा पुलिस को जागरूक किया जाना चाहिए, जिससे इनकी समस्याओं का त्वरित रूप से समाधान किया जा सके।
- स्वास्थ्य सुविधाएं, टीकाकरण, दवा वितरण, परिवार नियोजन, शिक्षा के मूल अधिकार इत्यादि इन जनजातियों तक सुनियोजित तरीके से पहुँच सके, यह सुनिश्चित करना चाहिए।
- रोज़गार हेतु कौशल विकास तथा प्रशिक्षण का प्रावधान किया जाना चाहिए। साथ ही, स्वरोज़गार के लिए वित्तीय सहायता और ऋण उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

घुमक्कड़ और अर्ध–घुमक्कड़ जनजातियों से संबंधित योजनाएं

- घुमक्कड़ और अर्ध–घुमक्कड़ जनजातियों के लिए प्री–मैट्रिक और पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति का प्रावधान है। जिन परिवारों की वार्षिक आय दो लाख से कम है, उनके बच्चों के लिए यह पात्रता है। इससे कई राज्यों में इसके सकारात्मक परिणाम देखे जा रहे हैं।
- उच्च शिक्षा के लिए घुमक्कड़ और अर्ध–घुमक्कड़ जनजातियों के बच्चों के लिए नानाजी देशमुख छात्रावास का निर्माण किया जा रहा है। इसके लिए पूरे देश में प्रतिवर्ष सभी शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश और आवासीय सुविधा हेतु सीटें आरक्षित रहती हैं। इनका वित्तीय अनुदान अनुपात केंद्र और राज्य का क्रमशः 75 और 25 प्रतिशत रहता है।
- राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के तहत सरकार द्वारा इन समुदायों के लिए रोज़गार पैदा करने के लिए सभी राज्यों में

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

अगरिया जनजाति

अगरिया जनजाति जैसाकि नाम से ही स्पष्ट है आग से संबंधित है और इनका इतिहास धातुकर्म के इतिहास से जुड़ा है। विमुक्त घुमक्कड़ जनजाति का यह समुदाय मध्य प्रदेश के पूर्वी ज़िले शहडोल, उमरिया डिंडोरी, अनूपपुर में पाया जाता है और उत्तर प्रदेश के दक्षिण–पूर्वी हिस्से सोनभद्र, मिर्ज़ापुर के आस–पास तथा छत्तीसगढ़ के उत्तरी हिस्से में पाए जाते हैं। पारम्परिक रूप से यह घुमक्कड़ जनजातियां अपने साथ पूरी घर–गृहस्थी का सामान लेकर चलती हैं और इनका आर्थिक पेशा आग से धातु को गलाकर दैनिक उपयोग में लाई जाने वाली सामग्री जैसे हंसिया, कुल्हाड़ी, चाकू, कृषि उपकरण इत्यादि बनाना है। इनको स्थानीय रूप से कच्चा माल लोहे की कबाड़, लकड़ी का कोयला मिल जाता है और मिट्टी के बर्तन स्वयं बना कर इसी को बेचकर जीवनयापन करते हैं। हाल ही में मध्य प्रदेश में भू–स्वामित्व योजना और वन अधिकार पट्टा के माध्यम से पुनर्वास और नियोजन के साथ इन्हें विकास की मुख्यधारा में जोड़ने का कार्य किया जा रहा है।

ग्रामीण स्तर पर क्लस्टर फेसिलिटेशन सेंटर बनाने का कार्य चल रहा है। इससे महिलाओं की आर्थिक भागीदारी और सामाजिक सशक्तीकरण को बल मिलेगा।

- घुमक्कड़ और अर्ध–घुमक्कड़ जनजातियों के लिए घरों की कमी को ध्यान में रखते हुए सरकार ने प्रधानमंत्री आवास योजना ग्रामीण के तहत अलग से प्रावधान किया है। देश के सभी राज्यों, जहां इस प्रकार के समुदाय चिन्हित किए गए हैं, में इस योजना कें अंतर्गत पक्के आवास और घरों का निर्माण किया जा रहा है।
- खाद्य सुरक्षा और कुपोषण से बचाने के लिए इन जनजातियों को राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2013 के तहत स्थानीय स्तर पर सार्वजनिक वितरण प्रणाली से जोड़ा गया है तथा खाद्यान्न उपलब्ध कराया जा रहा है।
- समय–समय पर इनका सर्वेक्षण और चिन्हित करने का कार्य स्थानीय प्रशासन द्वारा किया जाता है और सरकार द्वारा निर्धारित दिशा–निर्देशों के आधार पर सभी योजनाओं का लाभ भी दिया जाता है।
- विस्थापन और गतिशीलता को रोकने के लिए स्थायी आवासीय पट्टा का प्रावधान किया जा रहा है। तथा आवासीय क्षेत्रों का विकास, मूलभूत सुविधाओं का विस्तार, विद्युतीकरण, स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता और अन्य अवसंरचनात्मक विकास किया जा रहा है।

परम्परागत रूप से ये घुमंतु समुदाय राष्ट्रीय स्तर पर सबसे उपेक्षित, आर्थिक और सामाजिक रूप से वंचित समुदाय है। उनमें से अधिकांश पीढ़ियों से बेसहारा जी रहे हैं, उनका भविष्य अनिश्चित–सा बना रहा है। ऐसे में सरकार द्वारा क्रमबद्ध नियोजन और विकासात्मक ढांचा तैयार कर बहुस्तरीय लाभ देने का प्रयास आवश्यक है जिसमें मूलभूत जानकारी, सामाजिक–आर्थिक प्रस्थिति और जीवन स्तर के विभिन्न मानकों के आधार पर स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, रोज़गार, आय, श्रम, खाद्य सुरक्षा, वित्तीय समावेशन इत्यादि के द्वारा सहयोग दिया जा रहा है और निश्चित ही इनके समावेशी उत्थान का रास्ता तय होगा।

राज्य सरकारें भी घुमक्कड़ और अर्ध–घुमक्कड़ जनजातियों के विकास के लिए प्रतिबद्ध हैं और इनके रोटी, कपड़ा, मकान के साथ स्वास्थ्य, शिक्षा, रोज़गार, कौशल विकास और विभिन्न प्रकार की सामाजिक–आर्थिक सुरक्षा के लिए लगातार प्रयास और योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है। इन जनजातीय समूहों के लिए शैक्षणिक विकास की योजना, आर्थिक विकास की योजना, सामाजिक उत्थान हेतु आरक्षण का लाभ और विभिन्न प्रकार की गतिविधियों में प्रोत्साहन की योजनाएं लागू हैं। खेल और युवा मंत्रालय द्वारा क्षमता विकास, उच्च शिक्षा हेतु छात्रवृत्ति जैसे कदम से इन समुदायों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ा जा सकता है।

केंद्र सरकार द्वारा गैर–अधिसूचित, खानाबदोश और अर्ध–घुमक्कड़ जनजातियों तक सरकारी योजनाओं का लाभ पहुंचाने के लिए बहुआयामी पहल की शुरुआत की गई है। इसके लिए सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय द्वारा विशेष रूप से सर्वेक्षण, पहचान और निवास क्षेत्र चिन्हित करने का कार्य किया जा रहा है। इन समुदायों का पंजीकरण सुनिश्चित करने के लिए एक पोर्टल भी लांच किया गया है जिससे इनका डेटाबेस तैयार किया जा रहा है जो इनके शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास योजनाओं के लाभ लिए महत्वपूर्ण कदम होगा।

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं और जनजातियों के सामाजिक उत्थान में कार्यरत हैं। लेख में व्यक्त विचार निजी हैं।)

ई–मेल: savitakeshwaniup@gmail.com

उद्यमिता को गति देते नगालैंड के वन धन समूह

वन धन योजना में वन धन स्वयं सहायता समूह का विस्तार किया जाना है और इसमें 10 लाख आदिवासियों को कवर करने की योजना बनाई गई है। भारत सरकार ने प्रत्येक वन धन विकास कार्यक्रम के अंदर आने वाले सभी केंद्रों को 15 लाख रुपये आवंटित किए हैं। इन सभी केंद्रों पर अब तक 25 प्रतिशत से 30 प्रतिशत अनुदान भी दिया जा चुका है। इसे ट्राइफेड ने मंज़ूरी दी थी। वन धन योजना की शुरुआत से ही ट्राइफेड के पास यह दायित्व है कि वह इस साल मिशन मोड में कार्यक्रम के शुरू होने के बाद 50 हज़ार वन धन स्वयंसहायता समूहों को स्थापित कर दे।

जनजातीय उद्यमशीलता की एक और मिसाल के रूप में नगालैंड उभरकर सामने आया है, जिसने पूरे देश के सामने यह दिखा दिया है कि कैसे समूह विकास तथा मूल्य संवर्धन सदस्यों को ज़्यादा आय अर्जित करने में मदद करते हैं। ये समूह वन धन योजना के तहत विकसित किए गए हैं। उल्लेखनीय है कि वन धन योजना की शुरुआत जनजातीय मंत्रालय के भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास महासंघ (ट्राइफेड) ने राज्य विभागों के सहयोग से की है। योजना का लक्ष्य है वित्तीय पूंजी, प्रशिक्षण, सलाह आदि प्रदान करके जनजातियों को शक्तिसम्पन्न बनाना, ताकि वे अपना कारोबार तथा अपनी आय को बढ़ा सकें।

नगालैंड मधुमक्खी पालन और शहद मिशन, राज्य में शहद उत्पादन की नोडल एजेंसी है। यह उपरोक्त समूहों के लिए क्रियान्वयन एजेंसी के रूप में काम करती है। मिशन ने केवल मधुमक्खी पालन के लिए वन धन योजना का क्रियान्वयन किया है। पहले चरण में यह अकेला लघु वन्य उत्पाद है, जिसे शुरू में चार ज़िलों के पांच वन धन विकास केंद्र समूहों ने लागू किया था। चूंकि शहद उत्पादन मौसमी गतिविधि है और मौसम खत्म होने के दौरान या उसका अभाव हो जाने पर वन धन स्वयंसहायता समूह के सदस्यों के पास कोई काम नहीं रहता। इसलिए वन धन विकास केंद्र समूह की गतिविधियां साल भर चलाए रखने के लिए राज्य क्रियान्वयन एजेंसी ने विचार किया कि पहाड़ी घास (झाड़ू बनाने के काम आने वाली घास), ढींगरी खुम्बी (ऑयस्टर मशरूम), अदरक और माजूफल (गॉल–नट) जैसे अन्य लघु वन्य उत्पादों के लिए कोशिश की जाए।

ढींगरी मशरूम की खेती की शुरुआत कुछ चुने हुए स्वयंसहायता समूहों ने महामारी के दौरान की थी। आगे चलकर राज्य क्रियान्वयन एजेंसी इसके भारी उत्पादन, बाज़ार में इसकी खपत की अपार संभावनाओं तथा इसके सकारात्मक स्वास्थ्य पक्षों को देखते हुए इसके उत्पादन में जुट गई। वन धन विकास केंद्र समूह अब बड़े पैमाने पर ढींगरी मशरूम का उत्पादन कर रहे हैं। उनका लक्ष्य है कि आने वाले महीनों में लगभग पांच मीट्रिक टन कच्ची खुम्बी पैदा की जाए, जो "गुलाबी और सफेद" किस्मों की होंगी।

ट्राइफेड की कोशिशों से न्यूनतम समर्थन मूल्य और लघु वन्य उत्पाद के लिए मूल्य श्रृंखला के विकास के माध्यम से लघु वन्य उत्पादों की विपणन प्रणाली ने जनजातीय इको–सिस्टम को बड़े पैमाने पर प्रभावित किया है। इसकी खरीद 30 करोड़ रुपये से बढ़कर 1853 करोड़ रुपये जा पहुंची है, जिसके लिए भारत सरकार तथा देश की राज्य सरकारों की निधियों का इस्तेमाल किया गया है। वन धन जनजातीय स्टार्टअप इसी योजना का घटक हैं, जो वन्य उत्पाद जमा करने वाली और जंगल में निवास करने वाली जनजातियों तथा मकानों में रहने वाले जनजातीय शिल्पकारों के लिए रोज़गार पैदा करने के स्रोत के रूप में सामने आए हैं।

अकेले नगालैंड राज्य के लिए, 285 वन धन स्वयं सहायता समूहों को मंज़ूरी दी गई है, जिन्हें 19 वन धन विकास केंद्र समूहों में शामिल किया गया है। इनमें से नौ वन धन विकास केंद्र समूहों (135 वन धन स्वयंसहायता समूह) को संचालित कर दिया गया है। इनमें जुन्हेबोटो, वोखा, तुएनसांग, फेक और मोकोकचुंग ज़िले शामिल हैं। वन धन विकास केंद्र समूह मौजूदा समय में जंगली शहद, आंवला, माजूफल, पहाड़ी नीम, बेलचंडा, हल्दी, पहाड़ी घास,

ढींगरी खुम्बी का उत्पादन कर रहे हैं। इसके लिए अतिरिक्त लघु वन्य उत्पादों का मूल्य संवर्धन किया गया है, जिसके कारण लगभग 5700 सदस्यों को फायदा मिल रहा है। अब तक वन धन विकास केंद्र समूहों द्वारा 35.32 लाख रुपये की बिक्री हो चुकी है, जिसके आधार पर नगालैंड के जनजातीय समुदायों की आर्थिक उन्नति भी हुई है और वे शक्तिसम्पन्न भी हुए हैं।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 14 अप्रैल, 2018 को बीजापुर, छत्तीसगढ़ में पहले वन धन केंद्र का उदघाटन किया था। यह जनजातीय उत्पादों के लिए मूल्य संवर्धन केंद्र के रूप में शुरू हुआ था और दो वर्ष से भी कम समय में 37,362 वन धन स्वयंसहायता समूहों को 2240 वन धन विकास केंद्र समूहों में समेटा गया था। इनमें से प्रत्येक में 300 वनवासी शामिल थे। इसे ट्राइफेड ने मंज़ूरी दी थी। वन धन योजना की शुरूआत से ही ट्राइफेड के पास यह दायित्व था कि वह इस साल मिशन मोड में कार्यक्रम के शुरू होने के बाद 50 हजार वन धन स्वयंसहायता समूहों को स्थापित कर दे। ट्राइफेड ने 50 हज़ार वन धन स्वयंसहायता समूहों को मंज़ूरी देने का कारनामा 15 अक्टूबर, 2021 को कर दिखाया। अब 52,976 वन धन स्वयंसहायता समूह हो गए हैं, जिन्हें 3110 वन धन विकास केंद्र समूहों में बांट दिया गया है।

यह योजना परिवर्तन के प्रकाश–स्तंभ के रूप में सामने आयी है, जिसने जनजातीय इको–सिस्टम पर सकारात्मक प्रभाव छोड़ा है, क्योंकि यह जनजातियों के लिए रोज़गार का स्रोत बनी है। कार्यक्रम की खूबी इस तथ्य में निहित है कि इससे यह सुनिश्चित होता है कि मूल्यसंवर्धित उत्पादों की बिक्री से होने वाली आय सीधे जनजातियों को प्राप्त होती है।

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. * Delhi *

स्वच्छ सागर, सुरक्षित सागर

मानव समाज समुद्र और महासागरों की प्राकृतिक संपदा से लगातार लाभान्वित होता रहा है। हालाँकि हाल के दिनों में, प्लास्टिक अपशिष्ट ज़्यादातर भूमि आधारित गतिविधियों, पर्यटन और मछली पकड़ने से नदियों और विभिन्न जलमार्गों के माध्यम से तट और समुद्र तक पहुँचते हैं और समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र के लिए एक गंभीर खतरा पैदा करते हैं।

देश की स्वतंत्रता के 75वें वर्ष में आज़ादी के अमृत महोत्सव के हिस्से के रूप में देश भर में 75 समुद्र तटों पर तटीय सफाई अभियान चलाया जा रहा है। 03 जुलाई, 2022 से 75 दिनों का लंबा अभियान शुरू किया गया। यह अभियान 17 सितंबर, 2022 को 'अंतर्राष्ट्रीय तटीय सफाई दिवस' पर समाप्त होगा। विश्व स्तर पर, 'अंतर्राष्ट्रीय समुद्र तटीय सफाई दिवस' हर वर्ष सितंबर के तीसरे शनिवार को मनाया जाता है।

इस वर्ष 17 सितंबर, 2022 तक भारत सरकार अन्य स्वयंसेवी संगठनों और स्थानीय समाज के साथ मिलकर भारत के पूरे समुद्र तट पर 'स्वच्छ सागर, सुरक्षित सागर' पर स्वच्छता अभियान चला रही है। इस अभियान में पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारतीय तटरक्षक बल, राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण के साथ–साथ अन्य सामाजिक संगठन और शैक्षणिक संस्थान शामिल हैं। इस अभियान में मुख्य रूप से समुद्री अपशिष्ट को कम करने, प्लास्टिक के न्यूनतम उपयोग, स्रोत पर ही पृथक्करण और अपशिष्ट प्रबंधन के बारे में जागरूकता फैलाने के लिए भौतिक और आभासी (वर्चुअल) दोनों तरह से बड़े पैमाने पर सार्वजनिक भागीदारी देखी जाएगी।

अभियान के बारे में जागरूकता फैलाने के लिए एवं 17 सितंबर, 2022 को समुद्र तट की सफाई गतिविधियों हेतु स्वैच्छिक पंजीकरण के उद्देश्य से आम लोगों के लिए एक मोबाइल ऐप 'इको मित्रम' भी शुरू किया गया है।

जनजातीय विरासत को उजागर करते वन क्षेत्र के मेले

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

–डा. सुशील त्रिवेदी

भारत यदि उत्सवों का देश है तो उससे बढ़कर रंगारंग मेलों का देश है। ये मेले देश के अलग–अलग क्षेत्रों के धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक गतिविधियों को एक समेकित रूप में प्रस्तुत करते हैं। इन मेलों से उनके संबद्ध क्षेत्रों की अलग–अलग अस्मिता उभर कर आती है। इन मेलों में ग्रामीण क्षेत्र के लोग बहुत बड़ी संख्या में एकत्र होते हैं। इस कारण मेले के साथ व्यापार और मनोरंजन की व्यावसायिक गतिविधियां बड़े पैमाने पर जुड़ जाती हैं। ये मेले सामाजिक समागम और पारिवारिक मेलजोल का बड़ा अवसर उपलब्ध कराते हैं। मेलों में एक ओर तो सांस्कृतिक परम्परा की प्राचीनता साकार होती है तो दूसरी ओर, आधुनिक भारत का नया रूप भी सामने आता है।

कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भारत की सांस्कृतिक विविधता और उसकी एकता को रेखांकित करते हुए इसे 'महामानव समुद्र' निरूपित किया था। उनके ध्यान में हिमालय से हिंद महासागर तक और कच्छ से कामरूप तक फैली हमारी जीवनशैली और जीवन दर्शन का इंद्रधनुष था। उन्होंने यहां विविध मौसमों, अलग–अलग कृषि उत्पादों और लोक मान्यताओं की बिखरी हुई छवियों को निहारा था। बहरहाल, भारत की इन्हीं विविधताओं को हम वर्तमान में अलग–अलग स्थान और अलग–अलग समय पर होने वाले मेलों में साकार होते हुए देख सकते हैं।

भारत में अधिकांश मेले मार्च, अप्रैल और मई माह में लगते हैं क्योंकि इस अवधि में ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों को कुछ फुर्सत रहती है। इसके विपरीत जून, जुलाई, अगस्त और सितंबर माह में मेले लगभग नहीं आयोजित होते हैं। ये माह वर्षा ऋतु के होते हैं और इस अवधि में किसान खेती के कामों में व्यस्त रहते हैं। वर्षा के कारण आवागमन भी बाधित होने की संभावना रहती है, मेले के आयोजन और प्रबंधन की भी बड़ी समस्या होती है और यह समय स्वास्थ्य की दृष्टि से समागम के लिए उचित नहीं समझा जाता है।

दिलचस्प बात यह है कि 'मेला' शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के 'मेल' शब्द से हुई है जिसका अर्थ है मिलना या समागम करना। इसीलिए भारत में 'देव दर्शन, उत्सव, खेल, तमाशे के लिए नियत तिथि और निश्चित स्थान पर होने वाले जमावड़े को मेला' कहा जाता है। अंग्रेज़ी परिभाषा के अनुसार 'मेला' खरीदारों और

बस्तर का मढ़ई मेला

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

आदिवासी समाज के पारम्परिक मेले

साथियो, हमारे देश में अलग–अलग राज्यों में आदिवासी समाज के भी कई पारंपरिक मेले होते हैं। इनमें से कुछ मेले आदिवासी संस्कृति से जुड़े हैं, तो कुछ का आयोजन, आदिवासी इतिहास और विरासत से जुड़ा है, जैसे कि, आपको, अगर मौका मिले तो तेलंगाना के मेदारम का चार दिवसीय समक्का–सरलम्मा जातरा मेला देखने जरुर जाईये। इस मेले को तेलंगाना का महाकुम्भ कहा जाता है। सरलम्मा जातरा मेला, दो आदिवासी महिला नायिकाओं–समक्का और सरलम्मा के सम्मान में मनाया जाता है। ये तेलंगाना ही नहीं, बल्कि छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र और आन्ध्र प्रदेश के कोया आदिवासी समुदाय के लिए आस्था का बड़ा केंद्र है। आन्ध्र प्रदेश में मारीदम्मा का मेला भी आदिवासी समाज की मान्यताओं से जुड़ा बड़ा मेला है। मारीदम्मा मेला जयेष्ठ अमावस्या से आषाढ़ अमावस्या तक चलता है और यहाँ का आदिवासी समाज इसे शक्ति उपासना के साथ जोड़ता है। यहीं, पूर्वी गोदावरी के पेद्धापुरम में, मरिदम्मा मंदिर भी है। इसी तरह राजस्थान में गरासिया जनजाति के लोग वैशाख शुक्ल चतुर्दशी को 'सियावा का मेला' या 'मनखां रो मेला' का आयोजन करते हैं।

छत्तीसगढ़ में बस्तर के नारायणपुर का 'मावली मेला' भी बहुत खास होता है। पास ही, मध्य प्रदेश का 'भगोरिया मेला' भी खूब प्रसिद्ध है। कहते हैं कि भगोरिया मेले की शुरूआत, राजा भोज के समय में हुई। तब भील राजा, कासूमरा और बालून ने अपनी–अपनी राजधानी में पहली बार ये आयोजन किए थे। तब से आज तक, ये मेले, उतने ही उत्साह से मनाये जा रहे हैं। इसी तरह, गुजरात में तरणेतर और माधोपुर जैसे कई मेले बहुत मशहूर हैं। 'मेले' अपने आप में, हमारे समाज, जीवन की ऊर्जा का बहुत बड़ा स्रोत होते हैं। आपके आसपास भी ऐसे ही कई मेले होते होंगे। आधुनिक समय में समाज की ये पुरानी कड़ियाँ 'एक भारत–श्रेष्ठ भारत' की भावना को मज़बूत करने के लिए बहुत ज़रूरी हैं। हमारे युवाओं को इनसे ज़रूर जुड़ना चाहिए और आप जब भी ऐसे मेलों में जाएं, वहां की तस्वीरें सोशल मीडिया पर भी शेयर करें। आप चाहें तो किसी खास हैशटैग का भी इस्तेमाल कर सकते हैं। इससे उन मेलों के बारे में दूसरे लोग भी जानेंगे। आप कल्चर मिनिस्ट्री की वेबसाइट पर भी तस्वीरें अपलोड कर सकते हैं। अगले कुछ दिन में कल्चर मिनिस्ट्री एक कम्पीटीशन भी शुरू करने जा रही है, जहाँ, मेलों की सबसे अच्छी तस्वीरें भेजने वालों को इनाम भी दिया जाएगा तो फिर देर नहीं कीजिए, मेलों में घूमियें, उनकी तस्वीरें साझा करिए, और हो सकता है आपको इसका ईनाम भी मिल जाए।

31 जुलाई, 2022 को प्रसारित प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी की 'मन की बात' के अंश

विक्रेताओं का वह जमावड़ा है जहां मनोरंजन और दिल बहलाने के साधन भी रहते हैं। इस तरह मेले के आयोजन के कई आयाम हैं और विविध रूप हैं।

भारत यदि उत्सवों का देश है तो उससे बढ़कर रंगारंग मेलों का देश है। ये मेले देश के अलग–अलग क्षेत्रों के धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक गतिविधियों को एक समेकित रूप में प्रस्तुत करते हैं। इन मेलों से उनके संबद्ध क्षेत्रों की अलग–अलग अस्मिता उभर कर आती है। आमतौर पर इन मेलों की सबसे पहली पहचान उस क्षेत्र के प्रमुख देवता और तीर्थस्थल से, दूसरी पहचान निश्चित नक्षत्र और तिथि पर होने वाले पर्व से और तीसरी पहचान नदियों और अन्य जलाशयों से, विशेषकर नदियों से संगम के साथ जुड़ी होती है। मेलों का महत्वपूर्ण संबंध मौसम और कृषि से भी होता है–खासकर खरीफ और रबी की फसलों के कटने के समय से। इन मेलों में ग्रामीण क्षेत्र के लोग बहुत बड़ी संख्या में एकत्र होते हैं। इस कारण मेले के साथ व्यापार और मनोरंजन की व्यावसायिक गतिविधियां बड़े पैमाने पर जुड़ जाती हैं। ये मेले सामाजिक समागम और पारिवारिक मेल–जोल का बड़ा अवसर उपलब्ध कराते हैं। पिछले कुछ दशकों से इन मेलों में जनसंचार के पारंपरिक और आधुनिक माध्यमों के द्वारा शासन अपनी कल्याणकारी योजनाओं और विकास की उपलब्धियों की जानकारी जनता तक पहुंचाने का प्रयास करता है तो कॉर्पोरेट सेक्टर अपने उत्पादों का प्रचार करता है। मेलों में एक ओर तो सांस्कृतिक परम्परा की प्राचीनता साकार होती है तो दूसरी ओर, आधुनिक भारत का नया रूप भी सामने आता है।

संसार में प्रत्येक समुदाय की अपनी अलग संस्कृति, परम्परा, नृजातीय पहचान, लोकाचार, धार्मिक मान्यताएं और संसार के प्रति विशिष्ट दृष्टिकोण होता है। जनजातियों के मामले में यह दृष्टिकोण और भी अलग होता है। भारत की कोई 8 प्रतिशत जनसंख्या जनजातियों की है। भारत में लगभग पंद्रह करोड़ आदिवासी हैं जो छः सौ जनजातीय समूहों और समुदायों में बंटे हैं। इन जनजातियों में से कुछ जनजातियां, जैसे–अण्डमान निकोबार में रहने वाली जनजाति, सभी प्रकार के नए संपर्क को लेकर आशंकित रहती है जबकि देश की अधिकांश जनजातियां आधुनिक संसार के प्रति अनुकूलता प्रदर्शित करती हैं। बहरहाल, एक बात सब में सामान्य है वह यह है कि प्रत्येक जनजाति अपनी जड़ों से जुड़ी रहती हैं। इनमें से प्रत्येक जनजाति की अपनी अलग संस्कृति और परम्परा है। यह बात अलग है कि सभी जनजातियों के लिए जल, जंगल और ज़मीन से जुड़ी मान्यताएं उनके जीवन में केन्द्रीय महत्व की होती हैं। ये मान्यताएं अलग–अलग क्षेत्र और जलवायु के अनुसार अलग–अलग रूप ग्रहण करती हैं। इन जनजातीय समुदायों के

Academy For Education & Training Pvt. Ltd.

लिए उनके दैनिक जीवन में प्रकृति का महत्व सर्वोपरि होता है। उनका रहन–सहन, पहनावा और खान–पान भी जल, जंगल और ज़मीन के प्रति उनके लगाव को दर्शाता है और यह लगाव उनके उत्सव के आयोजन के अवसर पर विशेष रूप से उभरता है। उनके बहुतेरे उत्सवों के साथ मेलों का आयोजन जुड़ा रहता है।

तेलंगाना का मेदारम जातरा मेला

भारत के अधिकांश राज्यों में ये जनजातियां निवास करती हैं। पहले इन जनजातियों का सांस्कृतिक कार्यकलाप उनके अपने–अपने वन्य क्षेत्र तक सीमित रहता था। किन्तु अब उनका सांस्कृतिक वैभव अखिल भारतीय रूप से लोकप्रिय और लोकमान्य हो गया है। असम के बोडो, अरुणाचल के न्यासी, नगालैंड के नगा, मेघालय के खासी, मध्य प्रदेश के भील, बस्तर के माड़िया, तेलंगाना के गौड़ और कर्नाटक के कुरूवा जैसे हर क्षेत्र के आदिवासी समुदाय की अपनी सांस्कृतिक अस्मिता है जो उनके उत्सवों और मेलों के अवसर पर विशेष रूप से अभिव्यक्त होती है।

वैविध्य भरे जनजातीय उत्सवों में से कुछ की झलक इस प्रकार है अरुणांचल की न्यासी जनजाति के लोग नव वर्ष के प्रारंभ में न्योकुंभ युलो का आयोजन करते हैं। इस अवसर पर वे अपने पुरखों को याद करने के लिए विभिन्न कर्मकाण्ड संपन्न करते हैं और उसके साथ ही अपनी परम्पराओं, वेशभूषा, व्यंजनों, लोकनृत्य आदि का पूरे वैभव के साथ प्रदर्शन करते हैं।

असम की बोडा जनजाति नव वर्ष पर बैसागु पर्व मनाती है। इस दिन पूरे असम में जगह–जगह आनंद मेले आयोजित होते हैं जिनमें देवता की अभ्यर्थना करने के साथ नृत्य, गीत, खान–पान और कला तथा संस्कृति का रंगारंग आयोजन होता है।

नगालैंड में हॉर्नबिल का उत्सव दिसंबर में मनाया जाता है जिसमें नगा जनजाति के लोग पूरी ऊर्जा और भरपूर आनंद का प्रदर्शन करते है। नगा विरासत का सर्वोत्तम प्रदर्शन इस अवसर पर आयोजित होने वाले सात दिवसीय मेले में देखने को मिलता है।

खासी समुदाय का पांच दिवसीय उत्सव–मेला नांगक्रेम उत्सव नवंबर माह में होता है। मेघालय की खासी जनजाति भरपूर फसल और अपने लोगों की समृद्धि के लिए यह उत्सव मनाती है।

राजस्थान के अरावली पर्वत की एक शृंखला के मध्य बसे डूंगरपुर में प्रति वर्ष बेणेश्वर मेला आयोजित होता है। चार दिन तक चलने वाला यह मेला राजस्थान की भील जनजाति के द्वारा मनाए जाने वाले सर्वप्रमुख उत्सव का अवसर होता है। इस अवसर की महत्ता इस बात से आंकी जा सकती है कि इसमें मध्य प्रदेश और गुजरात के भी भील जनजाति के हज़ारों लोग भाग लेते हैं। मेले के दौरान तरह–तरह के मनोरंजन के साधनों के अलावा, जादुई तमाशे व करतबों का प्रदर्शन तथा शाम में लोक कलाकारों द्वारा प्रस्तुत संगीत एवं नृत्य के कार्यक्रम पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। भील आदिवासी लोग समूह बनाकर अपनी पारम्परिक पोशाकों को पहने, नाचते–गाते इस पर्व पर नदी के संगम में स्नान करने आते हैं। यूं तो इस मेले में पांचों दिन लोगों का आना जारी रहता है, परंतु पूर्णिमा के दिन स्नान एवं पूजा करने वाले श्रद्धालुओं का हुजूम देखते ही बनता है। मेले का आनंद उठाने के दौरान यहां आने वाले पर्यटक डूंगरपुर के ऐतिहासिक किलों एवं मंदिरों को देखना नहीं भूलते।

मध्य प्रदेश के झाबुआ में भील और भिलाला जनजाति फसल की कटाई पर होली के अवसर पर आयोजित होने वाले भगोरिया मेले में एकत्र होती है। भगोरिया मेले में नृत्य और संगीत के माध्यम से आनंद और प्रेम का अद्‌भुत दृश्य उपस्थित होता है। गुलाल के बादल और रंगों की बौछार एक कल्पना लोक तैयार करते हैं। जनजातीय परिधान, अलंकरण, व्यंजन और उन्मुक्त खिलखिलाहट इस समागम को बेहद आकर्षक बना देती है।

तेलंगाना के गोड़ जनजाति के लोग जतारा उत्सव का आयोजन दिसंबर में करते हैं। इस अवसर पर आयोजित होने वाले मेले में ये लोग मोर के पंख के मुकुट पहनकर गुसादी नृत्य करते हैं। वैसे तो जतारा उत्सव पूरे मध्य क्षेत्र की अलग–अलग जनजातियों द्वारा उनके अपने क्षेत्रों में अलग–अलग समय पर मनाया जाता है किन्तु तेलंगाना के जतारा का अपना अलग वैभव है।

पूरे भारत में बस्तर के दशहरा मेले की अपनी विशिष्ट पहचान है। यह बस्तर क्षेत्र की जनजातियों का सबसे बड़ा मेला है। दशहरे का उत्सव पूरे देश में नौ दिन मनाया जाता है किन्तु बस्तर में यह 75 दिन तक चलने वाला अनूठा आयोजन है। दशहरे पर रावण

दहन नहीं होता बल्कि बस्तर की आराध्य देवी दंतेश्वरी की पूजा का महाउत्सव होता है। इस अवसर पर अति विशाल जन–समूह एकत्र होता है और अपनी लोक संस्कृति का श्रेष्ठतम आनंदोत्सव प्रदर्शित करता है। दशहरे मेले के सिलसिले में मुरिया दरबार का विशेष आयोजन होता है जिसमें बस्तर में बसने वाली जनजातियों के लोग एकत्र होकर किसी समय अपने राजा से सीधा संवाद करते थे, लेकिन अब वे यह संवाद शासन के अधिकारियों से करते हैं। यह मेला मैसूर के दशहरे मेले और कोलकाता के नवरात्रि मेले से बिलकुल अलग होता है। इस मेले में भारत की जनजाति संस्कृति का श्रेष्ठ रंग और रूप पूरे वैभव के साथ प्रदर्शित होता है। कहना न होगा कि इस अवसर पर मनोरंजन, व्यापार, सामाजिक समागम और शासकीय संचार का अत्यंत प्रभावी समागम देखने को मिलता है। इसीलिए प्रतिवर्ष देश तथा विदेश से पर्यटक बहुत बड़ी संख्या में इस मेले का अद्भुत आनंद लेने के लिए एकत्र होते हैं।

छत्तीसगढ़ के आदिवासी क्षेत्रों में मेलों का रंग और रूप अलग ही होता है, जिनसे एक आदिम गंध सुवासित होकर बिखरती है। जनजातीय संस्कृति के अनुरूप उनके मेले धार्मिक–सामाजिक और वाणिज्यिक समागम के आद्य रूप को उजागर करते हैं। छत्तीसगढ़ के बस्तर क्षेत्र में ये मेले 'मड़ई' कहलाते हैं। मड़ई को लेकर पूरे वनांचल में बहुत उत्साह और रोमांच रहता है। घने जंगलों में प्रकृति के निकट जीवन जीने वाले आदिवासियों के लिए ये मड़ई सामाजिक संपर्क के विस्तार और वाणिज्यिक गतिविधि संपन्न करने का विशेष अवसर लेकर आती हैं। मंडइयों में आदिवासियों द्वारा देवी–देवताओं के प्रति श्रद्धा–भक्ति की नैसर्गिक अभिव्यक्ति की जाती है, किसी कामना की पूर्ति के लिए मड़ई में मनौतियां की जाती हैं और कामना की पूर्ति हो जाने पर, मनौती पूर्ति के लिए आभार प्रकट किया जाता है। लोग यहां धार्मिक अनुष्ठान में हिस्सा लेते हैं, अपने क्षेत्र के उत्पाद का विक्रय करते है और अपनी घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बाहर से आए उत्पाद का क्रय करते हैं। मड़ई में उन्हें अपने मनोरंजन और सामाजिक– समागम का भरपूर अवसर मिलता है।

बस्तर क्षेत्र की इन मड़इयों में नारायणपुर की मावली मड़ई और दंतेवाड़ा की फागुन का विशेष महत्व है। इन दोनों ही मड़इयों में बस्तर के आदिवासी विशाल संख्या में भाग लेते हैं। इधर पिछले कुछ दशकों में बस्तर क्षेत्र में आवागमन के साधनों का विस्तार होने और पर्यटन सुविधा उपलब्ध होने के कारण आदिम रंग, रूप और गंध को साकार देखने के लिए देश तथा विदेश के पर्यटक भी इन मड़इयों में बड़ी संख्या में शामिल होने लगे हैं।

नारायणपुर की मावली मड़ई कोई 800 वर्षों से अधिक समय से आयोजित होती चली आ रही है। इस मड़ई को आदिवासी समाज की धार्मिक आस्था और विश्वास को प्रदर्शित करने वाली सबसे बड़ी मड़ई का सम्मान प्राप्त है। आदिवासी समाज की अपने देवी–देवताओं के प्रति गहरी धार्मिक आस्था होती है और वह मड़ई माता के नाम से भरने वाली इस मड़ई में बहुत उत्साह और श्रद्धा से भाग लेता है। नारायणपुर के आसपास के आदिवासी इस मड़ई के शुरू होने के कुछ दिन पहले ही आने लगते हैं और मड़ई समाप्त होने के कई दिन बाद यहां से जाते हैं। ये आदिवासी जंगल के अंदर से आमतौर पर पैदल चलकर अपने पूरे परिवार के सभी बच्चों के साथ, खाना पकाने के बर्तन और अपने पारम्परिक साज–सज्जा का सामान लेकर मड़ई में सम्मिलित होते हैं। वे अपने क्षेत्र की वनोपज भी एकत्र कर विक्रय के लिए लेकर आते हैं।

मड़ई में एक हज़ार से भी ज्यादा व्यवसायी अपनी दुकानें लगाते हैं जिनमें ग्रामीण क्षेत्रों से आए वनवासियों की आवश्यकताओं एवं उनकी पसंद और मनोरंजन से जुड़ी सामाग्रियों को विक्रय हेतु रखा जाता है। दंतेवाड़ा की फागुन मड़ई बस्तर के शिल्पियों और कारीगरों के लिए भी एक आदर्श व्यापार स्थल है। बेलमेटल, टेराकोटा, लौह–शिल्प, पाषाण–शिल्प और पारम्परिक वस्त्र तैयार करने वाले शिल्पी और कलाकार यहां अपनी कला का प्रदर्शन कर इनका विक्रय करते हैं। सफरी धान से कलात्मक सजावटी वस्तुएं बनाने वाले कोटपाड़ (उड़ीसा) के कलाकार भी फागुन मड़ई में पहुंचते हैं। फागुन मड़ई के दौरान विकास प्रदर्शनी के अलावा मीना बाज़ार भी लगता है। यहां विभिन्न झूलों आदि का आनंद ग्रामीण उठाते हैं। दंतेवाड़ा वैसे भी शक्तिपीठ होने के कारण श्रद्धालुओं की आस्था का केन्द्र है और वहां निरंतर श्रद्धालु बड़ी संख्या में आते हैं। फागुन मड़ई का अवसर श्रद्धा और आनंद के समन्वय का अवसर होता है। इस कारण न केवल भारत के भिन्न–भिन्न स्थानों से बल्कि विदेशों से पर्यटक बड़ी संख्या में इस मड़ई में सम्मिलित होने के लिए आते है।

समग्रतः पूरे भारत में आदिवासी क्षेत्र में मेले उनकी संस्कृति से साक्षात्कार कराते हैं तो वे उनके सामाजिक समागम और वाणिज्यिक व्यवहार का भी परिचय देते हैं। इन मेलों में आदिवासी नृत्यों और संगीत की आदिम धुन और उसकी मोहकता पूरे वैभव में साकार होती है। इनमें आदिवासी समाज अपनी सारी भौतिक कठिनाइयों को भुलाकर पारभौतिक तन्मयावस्था में डूब जाता है तो अपने सामाजिक परिवेश में आनंदातिरेक में लीन हो जाता है। यह वह अनुभव हैं जिसे इन मेलों में शामिल होने वाले पर्यटक भी किसी अंश तक प्राप्त करते हैं।

(लेखक रिटायर्ड आईएएस अधिकारी हैं। साहित्य, संस्कृति, लोककला और जनसंचार विषयों पर 1963 से लेखन कर रहे हैं और 28 से अधिक मूल पुस्तकें लिखी हैं। लेख में व्यक्त विचार निजी हैं।)

ई–मेलः **drsushil.trivedi@gmail.com**

कुरुक्षेत्र के आगामी अंक

अक्तूबर 2022 – कृषि उद्यमिता

नवंबर 2022 – विज्ञान और तकनीक

Elite Academy for Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

आदिवासी संस्कृति में समानता एक जीवनशैली

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. * Delhi *

–अनिल चमड़िया

आदिवासी संस्कृति में समानता एक जीवनशैली के रूप में विकसित हुई है। इस समाज में लैंगिक भेदभाव के खिलाफ संघर्ष और विमर्श की एक लंबी धारा दिखती है। आदिवासी संस्कृति में कन्या भ्रूण हत्या की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। लिहाजा इनके बीच लिंगानुपात किसी तरह के विमर्श का हिस्सा नहीं होता है।

"देश में आज़ादी के इतिहास की बात होती हैं तो कुछ लोगों की चर्चा बहुत होती है, कुछ लोगों की आवश्यकता से अधिक होती है लेकिन आज़ादी में जंगलों में रहने वाले हमारे आदिवासियों का योगदान अप्रतीक था। वह जंगलों में रहते थे बिरसा मुंडा का नाम तो शायद हमारे कानों में पड़ता है लेकिन शायद कोई आदिवासी ज़िला ऐसा नहीं होगा जहां 1857 से लेकर अब आज़ादी आने तक आदिवासियों ने जंग न की हो, बलिदान न दिया हो। आज़ादी क्या होती है, गुलामी के खिलाफ जंग क्या होता है उन्होंने अपने बलिदान से बता दिया था।"

– प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी, 15 अगस्त 2017

प्रधानमंत्री के भाषण के इस अंश में हमें आदिवासियों के बीच संस्कृति के विकसित होने की पड़ताल करनी है। पहली बात तो यह है कि भारत में जिनकी अनुसूचित जनजाति के रूप में पहचान की गई है, वह कोई एक जाति समूह या समुदाय नहीं है। अनुसूचित जनजाति को ही हम आदिवासी के रूप में जानते व समझते हैं। लेकिन ऐसी समझ बनाने से पहले दो तरह के दृष्टिकोण से आदिवासी और संस्कृति के प्रश्न को देखना चाहिए। एक तो क्या हम विभिन्न जाति समूहों व समुदायों को एक ऐसी इकाई के रुप में देखते हैं जिनकी संस्कृति एक समान हैं; दूसरा दृष्टिकोण यह हो सकता है कि हम जाति समूहों व समुदायों की एक संस्कृति की पड़ताल करने की बजाय यह पड़ताल करें कि विभिन्न जातियों व समूहों में पहचान बनाने के बावजूद वह संस्कृति क्या है जो उनके बीच एक समान हैं? इन्हीं दो दृष्टिकोणों के आधार पर प्रधानमंत्री के भाषण के उक्त अंश में देखें तो एक संस्कृति का विकास दिखाई देता है। वह संस्कृति है स्वतंत्रता की जिसे हम आज़ादी भी कहते हैं। उक्त अंश के अनुसार **आदिवासियों ने गुलामी की स्थिति के खिलाफ अपनी आज़ादी को बरकरार रखने के लिए जंग की, बलिदान दिया।** इस तरह स्वतंत्रता

की संस्कृति में हस्तक्षेप के खिलाफ जंग और बलिदान का आदिवासियों ने चुनाव किया और नई तरह की शासन पद्धतियों को उनके ऊपर लादे जाने के विरुद्ध प्रतिरोध की एक संस्कृति को अपने अस्तित्व के लिए आवश्यक महसूस किया।

इस परिपेक्ष्य में हम संस्कृति के प्रादुर्भाव और उसके विकास एवं विस्तार को समझ सकते हैं। संस्कृति सृजित होती है। यदि हम आदिवासी शब्द को विभक्त कर दें तो संस्कृति को समझने में और आसानी हो सकती है। आदि और वासी के रूप में यह विभक्त हो सकता है। आदिकाल से इस ग्रह को मानव सभ्यता के विकास और विस्तार के दौरान विकसित होने वाली संस्कृतियों का एक परिपेक्ष्य यहां बनता है। लेकिन हम जब आदिवासियों की संस्कृति के बारे में बात कर रहे हैं तो अक्सर यह होता है कि संस्कृति के साथ कुछ और विशेषण जोड़ देते हैं या फिर संस्कृति के किसी एक पक्ष पर उस विमर्श को सीमित कर देते हैं। मसलन जब हम लोक संस्कृति की बात करते हैं तो यह एक कालखंड की तरफ हमारा ध्यान ज़्यादा ले जाता है और उस दायरे तक आदिवासी संस्कृति को समझने की सीमा निर्धारित कर देता है। ठीक इसी तरह कला और आदिवासी–संस्कृति की जब बात करते हैं तो संस्कृति के एक पक्ष पर बात कर रहे होते हैं। इस पक्ष पर बात करते हुए यह जानने का प्रयास करते हैं कि कला के विविध रूप क्या हैं और उनके ज़रिए किस तरह की संस्कृति को अभिव्यक्त किया जा रहा है और उनमें उसकी कितनी आलोचना है या फिर उसके विकास व विस्तार के उद्देश्य किस रूप में उसमें शामिल हैं।

दरअसल कला–संस्कृति पर विमर्श के माध्यम होते हैं। इसी तरह संस्कृति को धर्म के साथ प्रस्तुत करने की कोशिश होती है। लेकिन धर्म संस्कृति के विकास और विस्तार के बीच में एक ज़रिया है। यह ज़रिया किस रूप में संस्कृति के विकास और विस्तार की प्रक्रिया में शामिल होता है। यदि हम गौर करें तो यह बात स्पष्ट होती है कि आदिवासियों के बीच संगठित धर्म एक शासन पद्धति के रूप में हस्तक्षेप करने की कोशिश है।

आदिवासी मानव सभ्यता के साथ समस्त पर्यावरण के साथ सहसबंधों की संस्कृति विकसित करने पर ज़ोर देता रहा है। प्रकृति के साथ सह जीवन के रुप में उसे देखा जाता हैं। प्रकृति के बिना वह अपने व्यक्तिगत व सामूहिक जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकता है। आदिवासी की संस्कृति में प्रकृति के साथ मानव समाज का प्रेम का रिश्ता है। लेकिन वह प्रेम गैर–आदिवासी संस्कृति में पूजा का रूप ले लेता है। आदिवासी संस्कृति में प्रकृति के साथ गहरे मानवीय संबंधों को इस कविता के जरिए समझने की कोशिश हम कर सकते हैं।

महुआ का पेड़

झारखंड में रहने वाली नई पीढ़ी की जसिंता केरकेट्टा अपनी कविता में अपनी माँ से एक संवाद करती है :

मां तुम सारी रात
क्यों महुए के गिरने का इंतजार करती हो?
क्यों नहीं पेड़ से ही
सारा महुआ तोड़ लेती हो ?
मां कहती है
वे रात भर गर्भ में रहते हैं
जन्म का जब हो जाता है समय पूरा
खुद–ब–खुद धरती पर आ गिरते हैं
भोर, ओस में जब वे भीगते हैं धरती पर
हम घर ले आते हैं उन्हें उठाकर
अपनी
पेड़ जब गुज़र रहा हो
सारी रात प्रसव पीड़ा से
बताओ, कैसे डाल हिला दें ज़ोर से?
बोलो, कैसे तोड़ लें हम
ज़बरन महुआ किसी पेड़ से ?
हम सिर्फ इंतज़ार करते हैं
इसलिए कि उनसे प्यार करते हैं ।

For Education & Training Academy Pvt. Ltd. Delhi

इस संवाद में मानवीय संवेदना की गहराई की थाह ली जा सकती है। मनुष्य के रूप में पर्यावरण जगत के प्रति संवेदना का यह एक ऐसा उदाहरण है जो प्रेम की संस्कृति की विराटता को जाहिर करता है। दरअसल आदिवासी संस्कृति पर कहां खड़े होकर

विचार कर रहे हैं, यह बहुत महत्वपूर्ण होता है। संवेदनहीनता को विकास और संवेदनशीलता को पिछड़ापन कहा जा सकता है लेकिन यह आदिवासियों के बीच में बैठकर नहीं। जसिंता जब सवाल करती है कि पेड़ से ही उसकी मां सारे मुहआ क्यों नहीं तोड़ लेती है तो यह पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता की संस्कृति को तिलांजली देने या पर्यावरण के जीवन की परवाह नहीं करने की तरफ मनुष्य को धकेलने की जो कोशिश की गई है, उसकी तरफ इशारा करता है। आदिवासी संस्कृति से बाहर पेड़ से महुआ को तोड़ लाने को कामयाबी के रुप में चिन्हित किया जा सकता है और महुआ पेड़ से तोड़ने वालों को कामयाब और योग्य समझा जा सकता है। कहे कि विकास की संस्कृति को इसी रूप में विस्तार मिलता रहा है।

यदि यह माना जाए कि आदिवासियों की संस्कृति मानव सभ्यता के विकास और विस्तार की यात्रा के मूल में गतिशील रहती है। मानव सभ्यता के विकास में बुनियादी बातें जो हो सकती हैं, उसे सूचीबद्ध करें तो यह स्पष्ट हो सकता है। स्वतंत्रता, संवेदना के साथ साहस, सहयोग और समानता पर हम आगे चर्चा कर सकते हैं। एक लेखक ने बस्तर में घूमकर यह जाना कि सहयोग और सामूहिकता की भावना का जन्म कहां से हुआ है। यह नई पीढ़ी के लेखक हैं और पाते हैं कि बस्तर के आदिवासी बात करते हुए शर्माएंगे। नज़रें भी नही मिलाएंगे। झिझकेंगे लेकिन आपको गले लगाएंगे। वे अपना सब कुछ दे देंगे, जो भी उनके पास है। **यहां जंगलों में इनकी जीवनशैली में गजब की सहयोग की भावना को देख पाएंगे और ये महसूस कर पाएंगे कि सामाजिक मेलजोल का इससे अच्छा उदाहरण ओर कोई नही हो सकता।** गैर–आदिवासी संस्कृति में 'मैं' को लेकर आगे बढ़ने का प्रचलन है। इस 'मैं' से प्रकृति से एक अलगाव की स्थिति पैदा होती है, "हम" के टूटन की स्थिति पैदा होती है। सहयोग दरअसल सामूहिकता को जन्म देता है और सामूहिकता से संस्कृति संगठित होती है। यह संस्कृति पूरी जीवनशैली में बहती रहती है। लेखक बताता है कि उसने यह दैनिक जीवन के विभिन क्रियाकलापों में देखा। चाहे वो उनके पूरे गाँव (पारा) द्वारा जंगली सुअर का सामूहिक शिकार हो या उसको पकाकर खाना हो, साप्ताहिक बाज़ार हो या धान की बुवाई और कटाई हो, जंगल से सूखी लकड़ी लाना हो या नदी से पानी लाना हो, महुवा बीनना हो या तेंदूपत्ता लाना हो, रात भर कोई उत्सव मनाना हो या महुवा पीना हो, हर जगह आपसी सहयोग अहम है। यहां तक कि विवाह में केवल परिचित लोगों को ही नही बुलाया जाता बल्कि अपरिचित लोग अधिक शामिल होते हैं। साप्ताहिक बाज़ार में जिसके घर शादी है, वो गले मे ढोल टांगकर उसे बजाते हुए जाएगा और बताएगा कि अमुक पाड़ा में अमुक दिन शादी है जिस जिसने उसे सुना वो लोग तय समय पर वहां चले जाएंगे और दो रात वहीं रुकेंगे। इतने लोगों के खाने की व्यवस्था पूरा पाड़ा मिलकर करता है।

किसी के घर मौत हो गई तो अगले कई दिनों तक उसके घर के सारे कामकाज पाड़ा के अन्य लोग करेंगे। इसे इस तरह देखने की ज़रूरत है कि संस्कृति एक विशाल वृक्ष को सृजित करती है और वह फल, फूल, छाया, हरियाली, वर्षा यानी जीवन जीने की एक शैली को विकसित करती है। जैसे इसके विपरीत "मैं" की जीवनशैली ईर्ष्या, द्वेष ओर घृणा पैदा करती है।

इसी कड़ी को हम आगे बढ़ा सकते हैं कि आदिवासी संस्कृति में समानता एक जीवनशैली के रूप में विकसित हुई है। इस समाज में लैंगिक भेदभाव के खिलाफ संघर्ष और विमर्श की एक लंबी धारा दिखती है। आदिवासी संस्कृति में कन्या भ्रूण हत्या की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। लिहाजा इनके बीच लिंगानुपात किसी तरह के विमर्श का हिस्सा नहीं होता है। कन्या भ्रूण हत्या दरअसल असमानता की स्वीकृति देने वाली संस्कृति का एक रूप भर है। इस असमानता का एक ढांचा ही विकसित हुआ है। यह ढांचा पुनर्विवाह पर रोक, दहेज हत्या, गोरा–काला, पुरुष की उम्र ज़्यादा और महिला की उम्र कम होने की प्रथा आदि की पृष्ठभूमि तैयार करता है सृजन के बजाय टूटन की स्थितियां इससे विकसित होती हैं। यह माना जा सकता है कि श्रम का लैंगिक विभाजन असमानता को स्वीकृति देने की प्रारम्भिक अवस्था होती है। यह किस रूप में और किस हद तक समाज में एक भयावह संगठित रूप तैयार करती है, इसे संकेत के रूप में केवल इस उदाहरण से समझा जा सकता है। अधिकतर आदिवासी भाषाओं में कोई स्त्री–सूचक गाली नहीं है। इसका अर्थ यह नहीं है कि गालियां नहीं हैं; आदिवासी संस्कृति में गुस्सा या प्रतिक्रिया व्यक्त करने की भावना नहीं है। लेकिन यह गालियां उस समाज में कम से कम असमानता की संस्कृति के व्याप्त होने के हालात को नहीं दर्शाती हैं। यह अंधविश्वास से जुड़ी हो सकती हैं। मुझ जैसे लोगों की यह समझ बनती है कि अंधविश्वास से मुक्ति की यात्रा आदिवासी समाज में विभिन्न स्तरों पर हस्तक्षेप से बाधित होती रही है। इसीलिए कई तरह की कुप्रथाओं के लिए अंधविश्वास अपनी जड़ें जमाए हुए हैं। लेकिन जैसा कि यह ऊपर कहा गया है कि आदिवासी कोई एक जाति समूह नहीं है। विभिन्न तरह की भौगोलिक परिस्थितियों में रहने वाली जातियों को आदिवासी मानने के मानक तैयार किए गए हैं। आदिवासी समूहों में अंधविश्वास और कुप्रथाओं के भी स्तरों में भिन्नता मिलती है। आदिवासी समूहों के बीच में विभिन्न स्तरों पर हस्तक्षेप की स्थितियों ने उनके बीच जारी संगठित सहयोग को विघटित किया है। लेकिन आदिवासी समूहों का बड़ा भाग आज भी अपनी संस्कृति के साथ जुड़ा है जिन्हें मुख्यधारा की संस्कृति से अलग माना जाता है। वह संस्कृति विभिन्न स्तरों पर हस्तक्षेप के खिलाफ अपने विभिन्न रूपों में प्रतिक्रिया मुख्यधारा के बीच व्यक्त होती है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं। लेख में व्यक्त विचार निजी हैं।)

ई–मेलः namwale@gmail.com

Education & Training Pvt. Ltd. Delhi

हमारी पत्रिकाएं

योजना
विकास को समर्पित मासिक
(हिंदी, अंग्रेजी, उर्दू व 10 अन्य भारतीय भाषाओं में)

प्रकाशन विभाग
सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

कुरुक्षेत्र
ग्रामीण विकास पर मासिक
(हिंदी और अंग्रेजी)

आजकल
साहित्य एवं संस्कृति का मासिक
(हिंदी तथा उर्दू)

रोज़गार समाचार
साप्ताहिक
(हिंदी, अंग्रेजी तथा उर्दू)

बाल भारती
बच्चों की मासिक पत्रिका
(हिंदी)

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. * Delhi *

घर पर हमारी पत्रिकाएं मंगाना है काफी आसान...

आपको सिर्फ नीचे दिए गए 'भारत कोश' के लिंक पर जा कर पत्रिका के लिए ऑनलाइन डिजिटल भुगतान करना है–
https://bharatkosh.gov.in/Product/Product

सदस्यता दरें

प्लान	योजना या कुरुक्षेत्र या आजकल (सभी भाषा)	बाल भारती	रोज़गार समाचार	
वर्ष	रजिस्टर्ड डाक	रजिस्टर्ड डाक	मुद्रित प्रति (साधारण डाक)	ई-संस्करण
1	₹ 434	₹ 364	₹ 530	₹ 400
2	₹ 838	₹ 708	₹ 1000	₹ 750
3	₹ 1222	₹ 1032	₹ 1400	₹ 1050

सदस्यता शुल्क में रजिस्टर्ड डाक का शुल्क भी शामिल है। कोविड-19 महामारी के मद्देनज़र **नए ग्राहकों को अब रोज़गार समाचार के अलावा सभी पत्रिकाएं केवल रजिस्टर्ड डाक से ही भेजी जाएंगी।** पुराने ग्राहकों के लिए मौजूदा व्यवस्था बनी रहेगी।

ऑनलाइन के अलावा आप डाक द्वारा डिमांड ड्राफ्ट, भारतीय पोस्टल आर्डर या मनीआर्डर से भी प्लान के अनुसार निर्धारित राशि भेज सकते हैं। डिमांड ड्राफ्ट, भारतीय पोस्टल ऑडर या मनीआर्डर '**अपर महानिदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय**' के पक्ष में **नई दिल्ली** में देय होना चाहिए।

रोज़गार समाचार की 6 माह की सदस्यता का प्लान भी उपलब्ध है, प्रिंट संस्करण रु. 265/-, ई-संस्करण रु. 200/-, कृपया ऑनलान भुगतान के लिए https://eneversion.nic.in/membership/login लिंक पर जाएं। डिमांड ड्राफ्ट 'Employment News' के पक्ष में **नई दिल्ली** में देय होना चाहिए।

अपने डीडी, पोस्टल आर्डर या मनीआर्डर के साथ नीचे दिया गया 'सदस्यता कूपन' या उसकी फोटो कॉपी में सभी विवरण भरकर हमें भेजे। भेजने का पता है-
संपादक, पत्रिका एकांश, प्रकाशन विभाग, कक्ष सं. 779, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
अधिक जानकारी के लिए ईमेल करें- pdjucir@gmail.com
हमसे संपर्क करें- **फोन: 011-24367453,** (सोमवार से शुक्रवार सभी कार्य दिवस पर प्रात: साढ़े नौ बजे से शाम छह बजे तक)

कृपया नोट करें कि पत्रिका भेजने में, सदस्यता शुल्क प्राप्त होने के बाद कम से कम आठ सप्ताह लगते हैं, कृपया इतने समय प्रतीक्षा करें और पत्रिका न मिलने की शिकायत इस अवधि के बाद करें।

सदस्यता कूपन (नई सदस्यता/नवीकरण/पते में परिवर्तन)

कृपया मुझे 1/2/3 वर्ष के प्लान के तहत .... पत्रिका .... भाषा में भेजें।

नाम (साफ व बड़े अक्षरों में) ....

पता : ....

.... जिला .... पिन ....

ईमेल .... मोबाइल नं. ....

डीडी/पीओ/एमओ सं. .... दिनांक .... सदस्यता सं. ....

आदिवासी नेता और स्वतंत्रता आंदोलन

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

बिरसा मुंडा एक आदिवासी नेता और लोकनायक थे। ये मुंडा जाति से सम्बन्धित थे। उनका जन्म 15 नवम्बर, 1875 को झारखण्ड राज्य में रांची में हुआ। वर्तमान भारत में रांची और सिंहभूमि के आदिवासी बिरसा मुंडा को अब 'बिरसा भगवान' कहकर याद करते हैं। मुंडा आदिवासियों को अंग्रेज़ों के दमन के विरुद्ध खड़ा करके बिरसा मुंडा ने यह सम्मान अर्जित किया था। 19वीं सदी में बिरसा भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में एक मुख्य कड़ी साबित हुए थे। मुंडा के युवा बिरसा ने अपने समाज में व्याप्त बुराइयों के बारे में सोचना शुरू कर दिया और अपने लोगों को ब्रिटिश शासन से मुक्त करके उन्हें दूर करने का फैसला किया। उन्होंने मुंडाओं को नेतृत्व, धर्म, सम्मान और स्वतंत्रता प्राप्त करने वाली जीवन संहिता प्रदान की। 1894 में, उन्होंने चाईबासा की शिकायतों के निवारण के लिए मुंडाओं का नेतृत्व किया और उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। उन्होंने दो साल कठोर कारावास में बिताया। उन्होंने अपने लोगों, विशेषकर ज़रूरतमंदों और बीमारों की सेवा करना जारी रखा। बिरसा ने जीवन भर अंग्रेज़ों के खिलाफ संघर्ष किया। उन्हें 3 फरवरी, 1900 को चक्रधरपुर के जंगल में एक भीषण मुठभेड़ के बाद गिरफ्तार किया गया और कैद में ही उनकी मृत्यु हो गई। उनकी स्मृति आज भी पूज्यनीय है।

तिलका माँझी का जन्म 11 फरवरी, 1750 को बिहार के सुल्तानगंज में 'तिलकपुर' नामक गाँव में एक संथाल परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम 'सुंदरा मुर्मू' था। तिलका माँझी को 'जाबरा पहाड़िया' के नाम से भी जाना जाता था। किशोर जीवन से ही अपने परिवार तथा जाति पर उन्होंने अंग्रेज़ी सत्ता का अत्याचार देखा था। अनाचार देखकर उनका रक्त खौल उठता और अंग्रेज़ी सत्ता से टक्कर लेने के लिए उनके मस्तिष्क में विद्रोह की लहर पैदा होती। गरीब आदिवासियों की भूमि, खेती, जंगली वृक्षों पर अंग्रेज़ी शासक अपना अधिकार किए हुए थे। जंगली आदिवासियों के बच्चों, महिलाओं, बूढ़ों को अंग्रेज़ कई प्रकार से प्रताड़ित करते थे। अपने लोगों और भूमि की रक्षा के लिए दृढ़ संकल्प तिलका ने आदिवासियों को धनुष और तीर के उपयोग में प्रशिक्षित सेना के रूप में संगठित किया। सन् 1770 में संथाल क्षेत्र में भयंकर अकाल पड़ा। इसके साथ ही उनका 'संथाल हूल' (संथालों का विद्रोह) शुरू हुआ। उन्होंने अंग्रेज़ों और उनके चाटुकार सहयोगियों पर हमला करना जारी रखा। 1771 से 1784 तक तिलका ने औपनिवेशिक अधिकारियों के सामने आत्मसमर्पण नहीं किया। तिलका माँझी ऐसे प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने भारत को गुलामी से मुक्त कराने के लिए अंग्रेज़ों के विरुद्ध सबसे पहले आवाज़ उठाई थी, जो 90 वर्ष बाद 1857 में स्वाधीनता संग्राम के रूप में पुनः फूट पड़ी थी।

लक्ष्मण नायक एक आदिवासी लीडर और स्वतंत्रता सेनानी थे और दक्षिण उड़ीसा में आदिवासियों के अधिकारों के लिए कार्यरत थे। उनका जन्म 22 नवंबर, 1899 को कोरापुट में मलकानगिरी के तेंटुलिगुमा में हुआ था। ओडिशा के भूमिया जनजाति से संबंधित लक्ष्मण नाइक को कोरापुट और उसके आसपास के क्षेत्र जैसे मलकानगिरी और तेंतुलीपाड़ा के लोगों द्वारा आदिवासी नेता के रूप में स्वीकार किया गया। आदिवासी लोगों ने राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए खुद को समर्पित कर दिया। उन्होंने आदिवासियों को विकास कार्यों के लिए लामबंद किया जैसे सड़कों का निर्माण, पुलों का निर्माण और स्कूलों की स्थापना। उन्होंने ग्रामीणों से टैक्स नहीं देने को कहा। उन्होंने औपनिवेशिक उत्पीड़न और शोषण के खिलाफ लड़ाई का नेतृत्व किया। 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान, उन्हें मथिली का प्रतिनिधित्व करने के लिए नामित किया गया था। उन्होंने औपनिवेशिक सत्ता के खिलाफ एक मुख्य हथियार के रूप में अहिंसा का इस्तेमाल किया। आदिवासी लोगों ने उन्हें 'मलकानगिरी का गांधी' कहा। इस क्षेत्र की बोंडा जनजातियों ने लक्ष्मण नाइक के नेतृत्व में मथली पुलिस स्टेशन पर कब्ज़ा कर लिया। पुलिस ने गोलियां चलाईं, जिसमें लगभग 7 लोग मारे गए और कई घायल हो गए। ब्रिटिश सरकार ने उनके बढ़ते प्रभाव को देख, उन्हें एक झूठे हत्या के आरोप में फंसा दिया। उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और फाँसी की सज़ा सुनाई गई। 29 मार्च, 1943 को बेरहामपुर जेल में उन्हें फाँसी दे दी गई। अपने अंतिम समय में उन्होंने बस इतना ही कहा था, "यदि सूर्य सत्य है, और चंद्रमा भी है, तो यह भी उतना ही सच है कि भारत भी स्वतंत्र होगा।"

राजमोहिनी देवी–मांझी जनजाति (गोंड समूह) से संबंधित राजमोहिनी देवी का सरगुजा और आसपास के क्षेत्रों के आदिवासियों पर अत्यधिक प्रभाव था। उन्होंने बापू धर्म सभा आदिवासी सेवा मंडल की स्थापना की, और 1960 में उनके लगभग 80,000 अनुयायी थे। वह गांधीवादी आदर्शों से प्रेरित थीं। उन्होंने आदिवासियों को जागरूक किया और शराब, अंधविश्वास की बुराइयों के खिलाफ लड़ाई लड़ी और महिलाओं की मुक्ति की दिशा में काम किया। ■

आदिवासी कला-संस्कृति : एक झलक

कालबेलिया नृत्य

कालबेलिया नृत्य कालबेलिया आदिवासियों की सांस्कृतिक पहचान है। यूनेस्को ने इसे दुनिया की अमूर्त सांस्कृतिक धरोहर की सूची में शामिल किया है। यूनेस्को की इस पहल के बाद कालबेलिया नृत्य को वैश्विक स्तर पर सांस्कृतिक उद्योग का हिस्सा बनने का मौका मिला। इस विधा की नर्तकी गुलाबो को पद्मश्री मिल चुका है। यह आदिवासी समुदाय सांप को पकड़ कर करतब दिखा कर रोटी का जुगाड़ करता है और ख़ानाबदोश जीवन जीता है। वन्य जीवन संरक्षण अधिनियम के लागू होने से उनकी आजीविका पर असर पड़ा है। कालबेलिया नाच का गुरु और प्रणेता सांप है। सांप कालबेलिया आदिवासी समुदाय के लिए कामधेनु की तरह हैं। कालबेलिया किसी भी परिस्थिति में सांप को मारते नहीं। काला नाग और गेहुअन दोनों उनके लिए जीविकोपार्जन का आधार हैं। इसलिए वे उनसे उतना ही प्रेम करते हैं, जितना किसान खेत से।

कालबेलिया समुदाय के लोग राजस्थान के पाली, अजमेर, चित्तौड़गढ़ और उदयपुर ज़िले में शहरों से बहुत दूर मरुस्थलों में निवास करते हैं।

गोदना प्रथा

छत्तीसगढ़ जनजातीय–बहुल राज्य है। सरगुजा और बस्तर अंचल की जनजातियों में गोदना प्रथा अधिक देखने को मिलती है। वैसे हिन्दू धर्म में लगभग सभी जातियों में गोदना प्रथा आदिकाल से प्रचलित है। यह प्रथा धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक और ऐतिहासिक तथ्यों से जुडी हुई है। गोदना शब्द का शाब्दिक अर्थ चुभाना है। शरीर में सुई चुभोकर उसमें काले या नीले रंग का लेप लगाकर गोदना कलाकृति बनाई जाती है। इसे अंग्रेज़ी में टैटू कहते हैं। कहीं–कहीं इसे 'गुदना' नाम से भी जाना जाता है। गोदना गुदवाने का विषय सभी जनजातियों में अलग–अलग है। कुछ आकृतियां सभी जनजाति के लोग गुदवाते हैं। माथे पर गोदना का अंकन आदिकाल से चला आ रहा है। इस गोदने को देखकर जनजातियों की पहचान आसानी से की जा सकती है।

सोहराई भित्ति चित्रण

'सोहराई' सर्दियों के फसल कटाई के बाद 'धन समृद्धि' के देवता और प्रकृति मां की पूजा उत्सव के दौरान बनायी जाने वाली भित्ति चित्र परम्परा है। झारखण्ड और पश्चिमी बंगाल के संथाल, उरांव, मुण्डा, प्रजापति और 'सदान' जातियों द्वारा, दीपावली के तुरंत बाद मनाया जाने वाला त्योहार 'सोहराई' पर्व है। 'सोहराई' नाम पूर्व पाषाण युगीन 'सोरो' शब्द से बना है, जिसका मतलब है एक छड़ी के साथ आगे बढ़ना।

इन चित्रों में वे अपने देवता, प्रकृति में विद्यमान फूल–पत्तियां, पेड़–पौधे, चिड़िया, गौरैया, मोर, तोता गिलहरी, सरीसृप छिपकली, सांप, जानवर जैसे गाय, बारहसींगा आदि को अनगढ़ लेकिन सुन्दर ढंग से अलंकृत करते हैं। पहाड़ और जंगल के करीब निवास करने के कारण वास्तव में प्रकृति उनकी आत्मा में बसती है। प्रकृति का नैसर्गिक सौंदर्य उनकी कला में अपनी अनूठी छटा बिखेर देता है। प्रकृति उनके लिए मां के समान है।

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

Elite Academy For Education & Training Pvt. Ltd. ★ Delhi ★

आज़ादी का अमृत महोत्सव

देश के सबसे बड़े सरकारी प्रकाशन समूह संग व्यापार का अवसर

हमारी लोकप्रिय पत्रिकाओं और साप्ताहिक रोज़गार समाचार की विपणन एजेंसी लेकर सुनिश्चित करें आकर्षक नियमित आय

विपणन एजेंसी मिलना... मतलब

- ✓ असीमित लाभ
- ✓ निवेश की 100% सुरक्षा
- ✓ स्थापित ब्रांड का साथ
- ✓ पहले दिन से आमदनी
- ✓ न्यूनतम निवेश-अधिकतम लाभ

रोज़गार समाचार के एजेंसी धारकों के लिए लाभ

प्रतियों की संख्या	खुदरा मूल्य में छूट
20-1000	25%
1001-2000	35%
2001-अधिक	40%

मासिक पत्रिकाओं के एजेंसी धारकों के लिए लाभ

प्रतियों की संख्या	खुदरा मूल्य में छूट
20-250	25%
251-1000	40%
1001-अधिक	45%

विपणन एजेंसी पाना बेहद आसान

- किसी शैक्षणिक योग्यता की बाध्यता नहीं
- कोई व्यावसायिक अनुभव जरूरी नहीं
- खरीद का न्यूनतम तीन गुना निवेश (पत्रिकाओं हेतु) अपेक्षित

सम्पर्क

रोज़गार समाचार
फोन: 011-24365610
ई-मेल: sec-circulation-moib@gov.in

पत्रिका एकक
ई-मेल: pdjucir@gmail.com
फोन: 011-24367453

पत्र भेजें : रोज़गार समाचार, कक्ष संख्या-779, 7वां तल, सूचना भवन, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003

कुल पृष्ठ : 56
आई.एस.एस.एन. 0971-8451
प्रकाशन की तिथि: 1 सितंबर 2022
डाक द्वारा जारी होने की तिथि : 5-6 सितंबर, 2022

R.N.I/708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2021-23
Licenced under U (DN)-54/2021-23
to Post without pre-payment at R.M.S. Delhi.
DL(DS)-49/MP/2022-23-24 (Magazine Post)

प्रतियोगिता दर्पण के अतिरिक्तांक

संघ एवं राज्य लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं के साथ-साथ अन्य सभी प्रतियोगिता परीक्षाओं के लिए विशेष उपयोगी

संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण

प. सीरीज–1 भारतीय अर्थव्यवस्था 2022	791	330.00
प. सीरीज–2 भूगोल (भारत एवं विश्व)	792	240.00
प. सीरीज–3 भारतीय इतिहास	795	170.00
प. सीरीज–4 भारतीय राजव्यवस्था एवं शासन	794	245.00
प. सीरीज–5 भारतीय कला एवं संस्कृति	796	155.00
प. सीरीज–6 सामान्य विज्ञान Vol. 1	829	130.00
प. सीरीज–6 सामान्य विज्ञान Vol. 2	830	115.00
प. सीरीज–7 समसामयिक घटनाचक्र 2022 Vol. 2	815	135.00
प. सीरीज–9 वस्तुनिष्ठ सामान्य हिन्दी	822	130.00
प. सीरीज–10 बौद्धिक एवं तर्कशक्ति परीक्षा	825	165.00
प. सीरीज–12 भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास	823	130.00
प. सीरीज–13 खेलकूद	828	240.00
प. सीरीज–14 कृषि विज्ञान	836	180.00
प. सीरीज–15 प्राचीन इतिहास	837	150.00
प. सीरीज–16 मध्यकालीन इतिहास	838	195.00
प. सीरीज–17 आधुनिक इतिहास	839	235.00
प. सीरीज–18 दर्शनशास्त्र	842	110.00
प. सीरीज–19 न्यू रीजनिंग टेस्ट	843	200.00
प. सीरीज–20 हिन्दी भाषा	860	135.00
प. सीरीज–21 संख्यात्मक अभियोग्यता	861	355.00
प. सीरीज–22 राजनीति विज्ञान	866	220.00
प. सीरीज–23 लोक प्रशासन	813	240.00
प. सीरीज–24 वाणिज्य	816	320.00
Series-1 Indian Economy 2022	790	365.00
Series-2 Geography (India & World)	793	355.00
Series-3 Indian History	798	165.00
Series-4 Indian Polity & Governance	797	245.00
Series-6 General Science Vol. 1	814	140.00
Series-6 General Science Vol. 2	818	99.00
Series-7 Current Events Round-up 2022 Vol. 2	807	145.00
Series-12 Indian National Movement & Constitutional Development	812	135.00
Series-15 Indian History-Ancient India	804	160.00
Series-16 Indian History-Medieval India	806	175.00
Series-17 Indian History-Modern India	802	180.00
Series-19 New Reasoning Test	826	260.00
Series-21 Quantitative Aptitude Test	820	295.00
Series-22 Political Science	821	250.00
Series-23 Public Administration	824	220.00
Series-24 Commerce	805	315.00
Series-25 Environment & We	846	215.00

Code No. 870
₹ 350.00

Code No. 801
₹ 295.00

Code No. 791
₹ 330.00

Code No. 790
₹ 365.00

Code No. 815
₹ 135.00

Code No. 807
₹ 145.00

Scan the QR Code with your mobile and open the link to see the range of extra issues.

QRPD002S

Download FREE QR Scanner app from the app store

To purchase online log on to **www.pdgroup.in**

प्रतियोगिता दर्पण
आगरा-282 005

Available on : pdgroup.in amazon flipkart

प्रकाशक और मुद्रक: मोनीदीपा मुखर्जी, महानिदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : विबा प्रेस प्रा. लि., सी-66/3, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेस-II, नई दिल्ली-110020, वरिष्ठ संपादक: ललिता खुराना